भारत-गीत

संपादक

श्रीदुलारेलाल भार्गव

(सुधा-संपादक)

गंगा-पुस्तकमाला का छठा पुष्प

भारत-गीत

[भारत-विषयक राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह]

लेखक

श्रीधर पाठक

"यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ;
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसम्भवम् ।"

प्रकाशक

गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
२९-३०, अमीनाबाद-पार्क
लखनऊ

तृतीय संशोधित और संवर्द्धित संस्करण

सजिल्द [illegible}]   सं० १९८५ वि०   [सादी ।।।=)

प्रवचन

कोई भी ऐसा जीवित, उन्नत राष्ट्र पृथ्वी-तल पर न होगा जिसके अपने जातीय गीत न हों, जिसका अपने प्रत्येक शब्द से हृदय में उत्साह और उत्तेजना उत्पन्न करनेवाला एवं स्वाभिमान और पूर्व गौरव को उभाड़नेवाला राष्ट्रीय गीत न हो। भारत में भी यह स्वदेश-प्रेम, देश-सेवा और देशोद्धार की प्रबल प्रवृत्ति और उन्नति की उच्च आकांक्षा का आशामय युग गुज़र रहा है। आज भारत में ऐसी आत्माओं की कमी नहीं है, जो सुसंचालित होने पर देश का बहुत कल्याण कर सकती हैं।

इस युग में प्रत्येक उत्सव आदि के अवसर पर भी ऐसे ही जातीय संगीत के गाए जाने की आवश्यकता है। राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक या जातीय सभा-समितियों के उत्सवों पर अब ऐसे ही जातीय या राष्ट्रीय गीत गाए जाने लगे हैं। यह हर्ष की बात है कि वर्तमान कवि-मंडली ने इस जातीय अभाव अथवा आवश्यकता का अनुभव करके उसकी पूर्ति का आयोजन आरंभ कर दिया है। प्रायः प्रत्येक कवि अपनी योग्यता और सूझ-बूझ के अनुसार ऐसे गीतों की रचना कर रहा है।

यह बात हिंदी-साहित्य-संसार में किसी से छिपी नहीं है कि अखिल भारतवर्षीय पंचम हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के सुयोग्य सभापति, खड़ी बोली की कविता के आचार्य और व्रजभाषा कविता के प्रवीण कवि पं० श्रीधरजी की कविता कैसी सुंदर, सरस और सहज होती है। आपके शब्दों में निराली माधुरी और भावों की भरमार रहती है। उनकी कविता में एक खूबी और है। वह कवि के हृदय का स्वाभाविक उद्गार या सच्ची अनुभूति का दर्शनीय चित्र हुआ करती है। उनकी शब्द-योजना कष्ट-कल्पना से कोसों दूर रहती है। पाठकजी भी देश-भक्ति के भावों से प्रेरित होकर समय-समय पर स्वतः और कभी उत्सवादि के अवसर पर औरों की प्रेरणा* से सुंदर जातीय संगीतों की रचना करते रहे हैं। आपकी वे रचनाएँ भिन्न-भिन्न पत्रों में, समय-समय पर, सादर प्रकाशित होती रही हैं। उन्हीं सब कविताओं का संग्रह यह पुस्तक—भारत-गीत—है।

इसका यह नाम सर्वथा संगत और सुंदर है। भारत द्वारा अथवा भारत के आत्मीयों द्वारा किसी भी सद्भाव का सानंद समुदीरण, हमारी समझ में, भारत-गीत समझा जाने की सुष्ठुता रखता है। यह नाम संगृहीत गीतों के भावों को सहज

* औरों की प्रेरणा पर रचे दो ही एक हैं।

ही व्यक्त करनेवाला और प्रभावोत्पादक है। हमें आशा है कि जो कुछ इसमें संगृहीत है, उसे सभी सहृदय भारतीय अपने हृदय के प्रणयपुटों में अमिट रूप में संपुटित पावेंगे। भारत-गीत के अंतर्गत कुछ गीत बहु-प्रचलित हो चुके हैं। कई गीत तो ऐसे हैं, जो प्रायः सर्वत्र भिन्न-भिन्न प्रकार से उत्सवों में अवश्य गाए जाते हैं, और बहुत कुछ राष्ट्रीय गीत का पद प्राप्त कर चुके हैं। उदाहरणार्थ "जय-जय प्यारा भारत देश"-गीत अक्सर पबलिक जलसों में—विशेष कर बालचर-मंडलियों के द्वारा—गाया जाता है।

भारत और भारतीय, दोनों के भक्तों को यह संग्रह एक प्रिय वस्तु होगा। यह गुटिका भारतीयों को स्वाध्याय के तौर पर नित्यप्रति काम में लानी चाहिए। इसका मनन-पूर्वक नित्य पाठ करने से चित्त में स्वदेश की ओर प्रति-क्षण प्रबल प्रेम का संचार होगा, और आत्म-गौरव का विकास होता भासित होगा। इसी से इसका अधिकाधिक प्रचार सर्वत्र वांछनीय है।

दुलारेलाल भार्गव

निवेदन

[ग्रंथकार की ओर से]

इस द्वितीय संस्करण में पाठकजी की इच्छा से उनके "भ्रमर-गीत" और "चर-गीत" जोड़ दिए गए हैं। "भ्रमर-गीत" अधिकांशतः अन्योक्तियाँ हैं; आशा है, सहृदय पाठक, अपनी-अपनी समझ के अनुसार, उन्हें स-रुचि पढ़ेंगे। "चर-गीत" बालचरों के वास्ते हैं; इनमें से कई एक गीत प्रचलित भी हैं। इनके अंत में तीन प्रयाण अर्थात् "मार्च" दिए हुए हैं। पहला संस्कृत में है जो कि प्रचलित अशुद्ध मार्च का, गति और ध्वनि में, अनुसरण करता है। दूसरा साधु लोगों के लिये है। तीसरा बच्चों को घर में सिखाने की चीज़ है। यह वर्णमाला मार्च है; इसमें वर्णों को परिवर्त (permutation) क्रम से स्थानांतरित करके अनेकों रुचिर गीत बनाए जा सकते हैं।

साधु प्रयाण (नारायण मार्च) हिंदुओं का है, परंतु जातीय रंग में रँगे हुए अ-हिंदुओं द्वारा भी गाया जा सकता है। पाठकजी इसी की तरह के दो एक और मार्च रचना चाहते थे जिनमें एक मुसलमानों का होता, परंतु यह विचार पीछे से उन्हें अगत्या त्यागना पड़ा। पाठकजी सब मुख्य धार्मिक मतों को समान श्रद्धा से देखते हैं, क्योंकि उनका विश्वास है कि प्रत्येक धर्म में सत्य का पर्याप्त सत्ता है। परंतु कहीं की साधारण जनता अभी ऐसे विश्वास के लिये तैयार नहीं है। पाठकजी आशा करते हैं कि मानव जाति में परस्पर का प्रेम जब चरमावस्था पर पहुँच जायगा तब ऐसी स्थिति अवश्य ही उपस्थित होगी। लोगों के हृदय में मानवता सर्वोच्च आसन

पर आसीन होगी और "धर्म" या "मज़हब" व्यक्तिगत "गौण" गुणों में गणना पावेगा। यह परिवर्तन आरंभ हो गया है और धीरे-धीरे पक्वता की ओर प्रगति कर रहा है। यह विना अधिक प्रयास के स्वत एव संपन्न हो जायगा।

पाठकजो एक बात और निवेदन करना चाहते हैं। वह कहते हैं कि हममें से हर एक को यह हृद्गत कर लेना चाहिए कि परमेश्वर से प्रत्येक नर नारी को पूर्ण मनुष्य-शक्ति प्राप्त है। वह प्रत्येक व्यक्ति की स्व-शक्ति है और वही ईश्वर-शक्ति है। उस ईश्वर-शक्ति के प्रयोग से संसार के सकल कार्य सिद्ध होते हैं और हो सकते हैं। उसी शक्ति का व्यक्तिगत और सामुदायिक प्रयोग स्वावलंब है। उसका उचित प्रयोग सुखांत होता है और अनुचित प्रयोग दुःखांत होता है। अतः परम उचित नीति वह है जो उसका सुखांत प्रयोग करवावे, और उसी नीति का सदा अवलंबन करना मनुष्य-समाज तथा मनुष्य-जातियों का धर्म है। एक कहावत है कि ईश्वर उनका सहायक होता है जो अपना साहाय्य आप करते हैं। यह कहावत उक्त सिद्धांत और विश्वास को पुष्ट और स्पष्ट करती है। अत: प्रत्येक सत्कार्य के संबंध में ईश्वर-शक्ति को स्मरण कर, उसके भरोसे पर, शांति, प्रसन्नता और धैर्य पूर्वक उसके अनुकूल और अनुरूप प्रवृत्ति रखना प्रत्येक मेधावी मनस्वी का शोभन कर्तव्य है। पद-पद पर नितांत व्यग्रता, अधीरता-पूर्वक खुचड़ निकालते, उलाहने देते हुए, तक़ाज़े के तौर पर ईश्वर से सहायता तलब करना, निर्बलता की निशानी है, कातरता है, अपराध है, ईश्वर की दी हुई प्रकृत-शक्ति का दुरुपयोग है। ऐसी प्रवृत्ति का अनिवार्य परिणाम स्वावलंब के ह्रास के सिवा कुछ नहीं हो सकता। स्वावलंब की शक्ति चिर-अभ्यस्त परावलंबन की दूषित वृत्ति से दब जाती है और कठिन कार्यों की सिद्धि के लिये दूसरों का मुँह ताकने की आदत पड़ जाती है। किसी व्यक्ति

या जाति को अपने लिये ऐसी परिस्थिति उपस्थित कर लेना अपने अनिष्ट का आवाहन करना है।

सामयिक पत्रों में बरसों से हिंदी-लेखकों की लेखनी से निकले हुए अनेकों उपालंभ अथवा उपालंभों में सने हुए लेख देखने में आते रहे हैं। कई प्रौढ़ लेखक भी इस प्रवृत्ति में परिलिप्त पाए गए हैं। यह उपालंभ ईश्वर को दिए हुए उलाहने हैं कि वह भारतवर्ष के उद्धार या हित के लिये कुछ नहीं कर रहा है, उनमें प्रार्थना भी शामिल है कि अब देर न करो, आओ और उबारो, जैसे पहले समयों में पुकारते ही आ जाते थे, बीसों बार भक्तों की सुध ले चुके हो, हमारी बिरियाँ क्यों गहरी नींद में ग़र्क़ हो रहे हो, इत्यादि इत्यादि। ईश्वर से पद-पद पर अपनी सेवा कराने की यह कामना प्रवृत्ति हमारी अधोपकर्षिणी, अवांछनीय, मानसिक स्थिति है। इसके परिहार की दृष्टि से पाठकजी ने दो एक पद्य उपालंभीय पद्यों के मुक़ाबिले में अपने उक्त उद्देश्य को उल्लिखित किए विना ही प्रकाशित किए थे, यथा—

नट नागर हैं न कहीं अटके
ओ आजा आजा शांति शक्तिदा आजा
उराहिने कौ उत्तर

(ये इस संकलन में सम्मिलित हैं।)

इस आशा से कि मेधावी जन उनके अभिप्राय को अवश्य अवगत कर लेंगे। परंतु परिणाम विपरीत हुआ। उपालंभों के लेखकों को उनमें कुछ और गंध आने लगी जिसके सूचित करने की यहाँ पर आवश्यकता नहीं, और पाठकजी का प्रयास विफल हुआ। उपालंभन परिपाटी अभी तक यथावत् प्रचलित है। स्वायत्तता की उषा अभी उदित नहीं हुई ; पराश्रय-वृत्ति ही अभी प्रबल दिखाई पड़ रही है। परंतु संभव है, कुछ समय के अनंतर स्वतः परिवर्तन हो जाय।

इन गीतों को पाठकजी ने परमार्थ दृष्टि से रचा है और वह

चाहते हैं कि ये नित्य-नित्य बढ़ता हुआ प्रचार पावें। इनके प्रकाशन का अधिकार सबको है। यदि प्रकाशक जन इनके सर्व-द्वारा गाए जाने योग्य अंश को गुटिका-रूप में छापकर सस्ते दाम पर (सिर्फ़ लागत पर) बेचेंगे, तो वह सच्ची देश-सेवा के पुण्य के भागी होंगे।

१-४-१९२८

विषय-सूची

*

सामान्य गीत

भक्ति-प्रार्थना

१

जय, जय, श्रीश हे, भुवन-भूपति, भूत-गते
जय करुणानिधे, जगत-कारण, सत्य-सखे
सुहृद त्रिधाम के, सकल-सद्गुण-मंदिर हे
नित-नित दे हमें अमृत-जीवन-ज्योति, हरे

२

जब-जब धर्म का धरणि पै प्रभु ! ह्रास हुआ
थल-थल पाप का प्रबल वर्तित त्रास हुआ
जग, सुख-वर्त्म से विमुख हो, दुख-ग्रास हुआ
तब-तब तू हुआ उदय, दुर्नय नाश हुआ

३

प्रतिकृति की अतः सतत है, प्रभु, आस हमें
अघ-कृत हो जभी जगत में अति त्रास हमें
निज-परता करै निज नियंत्रित दास हमें
निज-पर-ज्ञान का अणु रहै न उजास हमें

४

जग यह किंतु हे अनघ ! क्यों अघ-युक्त हुआ
अविरत-क्यों नहीं, सुखद हे, सुख-भुक्त हुआ

तव पद-प्रेम में सतत क्यों नहिं सक्त हुआ
विविध प्रपंच के प्रभव से परिमुक्त हुआ ?

५

प्रभु, इस प्रश्न का प्रमित उत्तर हो कि न हो
जग समझै नहीं, तुम कभी कुछ दो कि न दो
पर यदि है सही कुछ कहीं, तुम सो कुछ हो
जग सब है वही जगपते ! तुम जो कुछ हो

६

सब तव ही स्वतः प्रतत है प्रतिभास प्रभो
बहु गुण रूप से विवृत, व्यक्त, विवर्तित हो
इस विधि सिद्ध है जगत का जब सत्त्व विभो
तब जग-भक्ति ही सविध क्यों तव भक्ति न हो?

७

उस सद भक्ति से भरित भू प्रभु भूरि करो
सदय स्व-शक्ति से दुरित-उद्भव दूर करो
विनय-निकेत हे, अनय के सब हेतु हरो
पय-धर प्रेम के, धरणि पै पय-प्रेम झरो

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, १३-२-१९१९

प्रकृति-वंदना

१

अहे त्रिजग-वंदिते त्रिजग-सत्त्व-संभाविते
त्रिशक्ति-घन-गुंफिते त्रिगुण-तंत्र-अंतर्हिते
त्रिवृत्ति-वर-कंदरे त्रिजग-मातृके इंदिरे
अवंध्य-विधि-बंधुरे भुवन-मंडने त्वां भजे

२

अहे त्रिजग-शासिनी त्रिजग-धाम-आवासिनी
त्रिक-क्रम-विकासिनी त्रितय-वर्ग-विन्यासिनी
भव-भ्रुकुटि-लासिनी सममितः समुद्भासिनी
मदंतर-विलासिनी मसृण-हासिनि, त्वां वृणे

३

अहे त्रिजग-सुंदरी त्रिजग-विस्फुरन्माधुरी
जग-त्रिक-पुरंदरी त्रिजग-चक्र-धुर्यंधरी
त्रि-विभ्रम-चमत्कृते कृति-चय-प्रपंचावृते
सतां हृदि समाहृते प्रकृति हे प्रिये त्वां स्तुवे

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, २४-१२-१९१८

भारत-मंगल

१

भरहु भूरि भारत-भुवि मंगल
दुरहु दूरि दुबिधा, दुभाव द्रुत,
सुभ उछाह छावहु छवि मंगल

२

फुरहु प्रेम, दिवि फोरि,
घोर घिरि घन अथोर आवहु द्रवि मंगल
पुरहु दृश्य सत कोटि कोटि शत,
सतत भाव भावहु फवि मंगल

३

भू, भ-चक्र, निहितर्क, नित्य क्रम,
अणु अणु अनुधावहु ध्रुव मंगल
जग सुहाग-अनुराग-राग-रत,
अविरत रव, गावहु कवि मंगल

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, ५-६-१९१९

शांति

ओ आ जा आ जा, शांति! शक्तिदा, आ जा
चर-अचर-विश्व-अभ्रांत-भक्तिदा, आ जा

१

जग-हृदय-पटल पर आशु अटल पद पा जा
सुर-नर-समाज में, सदय, सप्रेम समा जा
भ्रम-मूल, निपट जग-भूल, भूल बहुधा जा
कृत यदा-कदा त्रुटि-काज सदा बरका जा

द्रुत-दुरित-द्वेष-भव-क्लेश-मुक्तिदा, आ जा
ओ आ जा आ जा, शांति ! शक्तिदा, आ जा

२

ह्री-श्री-शोभिनि, शुचि-प्रेम-अंबुदा, आ जा
प्रिय-त्रिजग-अंब, त्रिभुवन-वशंवदा, आ जा
जग-संजीवनि, अग-जग-प्रलंबदा, आ जा
जग-सजग-ज्योति, जग-सुखद-संविदा, आ जा
भूलोक-स्वर्ग-संयोग-युक्तिदा, आ जा
ओ आ जा आ जा, शांति ! शक्तिदा, आ जा

३

विज्ञान-ज्ञान-आनंद-अमृतदा, आ जा
सर्वत्र-सुकृत-सम्मान-सुमतिदा, आ जा
बुध-संत-रमनि,सुख-सवनि,भुवन-मनि, आ जा
अविरत-अखंड-ब्रह्मांड-धमनि-ध्वनि, आ जा
अधिकृत-अशेष-उपभोग-भुक्तिदा आ जा
ओ आ जा आ जा, शांति ! शक्तिदा, आ जा

४

भू-व्योम-सोम-रवि-रोम-रोम में छा जा
अणिमादि-मयी, ओ अणु अणु बीच अमा जा
महिमा-महि-पोहिनि, मोह-अपोहिनि, आ जा
सुखमा-सुख-दोहिनि, विश्व-विमोहिनि, आ जा

बस-कारिणि, ओ रस-ओक-उक्तिदा, आ जा
ओ आ जा आ जा, शांति ! शक्तिदा, आ जा

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, १६ मेष, १६७६

सर्वं खल्विदं ब्रह्म १

सदुदय हृदय, सदय, गतभय, मम, भावय भवमानंदमयम्
यत्र सतत-संभ्रांत-भाव-बाहुल्यमुदेति च याति लयम्
पश्य तथाचात्मन्य-चमत्कृति-जन्य-चारु-चैतन्य-चयम्
निखिलसत्त्वमसि नु खलु "तत्त्वमसि" नूनमिदं यूयं च वयम्

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, २-१०-१६१७

भारत-धाम

१

त्रिभुवन-वंद्य भारत-धाम
त्रिजग-संपति-सुकृत-सुख-थल, त्रिजग-छवि-अभिराम

२

सुरुचि-सुमति-सनेह-शुचिता-पुंज, मंजुल-नाम
वीर-गेह, अमेय-विक्रम, ध्येय-भुव-गुण-ग्राम
त्रिभुवन-वंद्य भारत-धाम

३

त्रिजग-तेज-अशेष-शोभित, त्रिजग-सेवा-ठाम
सतत श्रीधर-विहित-बहुविधि-प्रयत-प्रेम-प्रणाम
त्रिभुवन-वंद्य भारत-धाम

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, ३१-१२-१९१८

भारत-धरनि

बंदहुँ मातृ-भारत-धरनि
सकल-जग-सुख-श्रैनि, सुखमा-सुमति-संपति-सरनि

२

ज्ञान-घन, विज्ञान-धन-निधि, प्रेम-निर्भर-भरनि
त्रिजग-पावन-हृदय-भावन-भाव-जन-मन-भरनि
बंदहुँ मातृ-भारत-धरनि

३

सेत हिमगिरि, सुपय सुरसरि, तेज-तप-मय तरनि
सरित-वन-कृषि-भरित-भुवि-छवि-सरस-कवि-मति-हरनि
बंदहुँ मातृ-भारत-धरनि

४

न्याय-मग-निर्धार-कारिनि, द्रोह-दुर्मति-दरनि
सुभग-लच्छिनि, सुकुल-पच्छिनि, धर्म-रच्छन-करनि

बंदहुँ मातृ-भारत-धरनि

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

मार्गशीर्ष कृष्ण ५, सं० १६७५

भारत-भूमि

जय जय भारत-भूमि हमारी

१

जय जग-रंजिनि, जय अघ-गंजिनि
संपति-सुमति-सुकृत सुख-पुंजिनि
बुध-जन-हृदय-सरोवर-कंजिनि
सकल सुकर्मन की महतारी
जय जय भारत-भूमि हमारी

२

जय हिम-शृंगा, सुर-सरि गंगा
साधु-समाज सुजन-सतसंगा
जय जग-क्लेश-प्रनाश-प्रसंगा
सुमिरत भरत मोद मन भारी
जय जय भारत-भूमि हमारी

३

जय भुवि-थंबिनि, सिंधु-नितंबिनि
त्रिभुवन-प्रेयसि, प्रेम-प्रलंबिनि

जयति जननि निज जन-अवलंबिनि

जय तुअ सुअन तपोबल-धारी

जय जय भारत-भूमि हमारी

४

जय अति सुंदरि, जय सुख-कंदरि

सती स्वधर्म-अतीव-अतंदरि

जगत-जोति, जग-सृष्टि-धुरंधरि

श्रीधर प्रनत प्रान बलिहारी

जय जय भारत-भूमि हमारी

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

कार्त्तिक शुक्ल १२, सं० १९७५

१४

सुधाम-संस्तुति

१

जय जय श्रीसारस्वत-धाम

जयति आर्य-अवतंस-अवनि शुभ,

जय सद्ग्रंथ-प्रशंसित नाम

२

सुविपुल-पुलिन-सरस्वति-सेवित

शस्य-शालि-शोभा-सुललाम

सुर-थल-सदृश-स्वयं-समलंकृत,

सुठि-दृश्यावलि-वलित-सुठाम

३

ऋत्विज-द्विज-सुगीत-स्वर-संगत-

ऋक्-अथर्व-यजु-संयुत-साम

जय अनवद्य-वेद-विद्या-गृह

अनघ, अनर्घ्य, अतिव अभिराम

४

सब विधि ऋद्धि-सिद्धि-परिपूरित

परम-रम्य-पुर-आश्रम-ग्राम

जय जग-पूज्य, पूर्व-जन-पद-वर

द्विज-श्रीधर-कृत-प्रेम-प्रणाम

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

आश्विन शुक्ल ३, सं० १९७५

वीर भोग्या वसुंधरा

प्रथित पुरातन नाम भूमि का वसुंधरा है

क्योंकि विश्व-भर का इसमें सर्वस्व भरा है

उसका परम पुनीत अंग प्रिय भरत देश है

जिसमें वसुधा के सर्वस का समावेश है

उस सर्वस के उपभोग के अधिकारी हैं हम सभी

इस वसुंधरा के वीर सुत बलधारी हैं हम सभी

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

आश्विन कृष्ण ७, सं० १९७४

स्मरणीय भाव

बंदनीय वह देश, जहाँ के देशी निज-अभिमानी हों
बांधवता में बँधे परस्पर, परता के अज्ञानी हों
निंदनीय वह देश, जहाँ के देशी निज-अज्ञानी हों
सब प्रकार पर-तंत्र, पराई प्रभुता के अभिमानी हों

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, सं० १६७०

वंद्य-वंदना

ऐसा जग में कौन जगत को निज-सम समझै
सबको तृण-सम, तृण से भी निज को कम समझै
संसार को असार, सृष्टि-क्रम को भ्रम समझै
कर्म-तंतु को किंतु विश्व-व्यापकतम समझै
त्यों अपने तन को कर्म-रण-रंग-भूमि समझै सतत
जय जयति कर्म-रण-वीर सो धर्म धीर त्रिभुवन-प्रणत

श्रीपद्म-कोट,
प्रयाग, २४-८-१६१८

देश-गीत

जय जय प्यारा भारत-देश

१

जय जय प्यारा, जग से न्यारा
शोभित सारा, देश हमारा
जगत-मुकुट, जगदीश-दुलारा
जग-सौभाग्य, सुदेश
जय जय प्यारा भारत-देश

२

प्यारा देश, जय देशेश
अजय अशेष, सदय विशेष
जहाँ न संभव अघ का लेश
संभव केवल पुण्य-प्रवेश
जय जय प्यारा भारत-देश

३

स्वर्गिक शीश-फूल पृथिवी का
प्रेम-मूल, प्रिय लोकत्रयी का
सुललित प्रकृति-नटी का टीका
ज्यों निशि का राकेश
जय जय प्यारा भारत-देश

४

जय जय शुभ्र हिमाचल-शृंगा
कल-रव-निरत कलोलिनि गंगा
भानु-प्रताप-चमत्कृत अंगा

तेज-पुंज तप-वेश
जय जय प्यारा भारत-देश

५

जग में कोटि-कोटि जुग जीवै
जीवन-सुलभ अमी-रस पीवै
सुखद वितान सुकृत का सीवै
रहै स्वतंत्र हमेश
जय जय प्यारा भारत-देश

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
का० शु० १५, सं० १९७४

जय भारत जय (१)

जय भारत जय, जय भारत जय

१

जय संसार-सुकृत-सेवन-रत
जय जन-भार-हरन-प्रेरित-मति
परम उदार, प्रेम-पूरित अति
पर-हित-काज-त्यजित-स्वारथ जय
जय भारत जय, जय भारत जय

२

धीरज-धर जय, वीर-प्रवर जय
कीरति कल जय, नीति विमल जय

सुखद-उदय जय, सुहृद-सदय जय
अयि अतिशयित दयित-सुहृदय जय
जय भारत जय, जय भारत जय

३

जग-भूषण जय, जित-दूषण जय
मित-भाषण जय, शुचि-शासन जय
सुकृत-भवन जय, प्रकृति-रमन जय
सुछवि-फबन जय, सुरभि-पवन जय
जय भारत जय, जय भारत जय

४

ऋषि-मुनि-गन जय, कृषि-धन-जन, जय
सुमति-सदन जय, कुमति-कदन जय
विशद-चरित जय, विभव-भरित जय
सुख-सुखमा-चय, महि-महिमा-मय
जय भारत जय, जय भारत जय

५

श्रुति-पारग जय, सत-मारग जय
जग-नागर जय, गुण-आगर जय
आरति-हर जय, भारति-धर जय
श्रीधर-प्रेम-पदारथ-वर जय

जय भारत जय, जय! भारत जय

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

मार्ग० शुक्ल १, सं० १६७४

1917

जय भारत जय (२)

१

जय भारत जय, जय भारत! जय

जय महिमामय, जय गुणधारी

२

दिव्य दिगंबर, सित-रज-धूसर

गंगाधर, शुचि अंग-मनोहर

कनक-रजत-गिरि-शीश-छटा छवि

तप-मंडित द्युति-पुंज-प्रसारी

३

जय जग-पावन, जय जग-भावन

सुख-मंदिर जय शांत सुहावन

सुपथ-प्रभाकर, सुमति-सुधाकर

जय वसुधा-वर, विश्व-विहारी

४

, जय जय सुरधुनि, जय जय जय दिनमनि

जय उपवन बन, सघन-गगन-ध्वनि

जय जल, जय थल, जय जग-कल-कल
जयति सकल जल-थल-नभ-चारी

२

जय हिंदू-जन, जय मुसलिम-गन
जैन, पारसी, बौद्ध, क्रिश्चियन
विविध धर्म-पथ, सुकृत-कर्म-रत
जस बरनत श्रीधर बलिहारी

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
बसंत-पंचमी, १९७५

भारत जय जय

भारत जय जय, भारत जय जय

१

आरज-सुकृत-प्रकाश-प्रकाशित
स्वर्गिक-प्रेम-प्रभास-प्रभासित
बुध-जन-हृदय-विलास-निसर्गज
त्रिभुवन-श्री-आवास, अहर्निशि
ईश-भक्ति उर धारत जय जय
भारत जय जय, भारत जय जय

२

सज्जनता जय, शुचि-मनता जय

शुभ-गुनता जय, दृढ़-प्रनता जय
मृदुता-मिलित-महा-घनता, अति
पावनता, मन-भावनता जय
निज-सम सबहि निहारत जय जय
भारत जय जय, भारत जय जय

३

धन्य-नाम जय, पुन्य-काम जय
वैरि-वाम जय, वीर-धाम जय
अति उदार जय, बल-अपार जय,
अघ-पछार जय, खल-प्रहार जय
निसि-दिन दीन-दया-रत जय जय
भारत जय जय, भारत जय जय

४

नेह-सिंधु जय, न्याय-बंधु जय
सुजन-हृदय-आकाश-इंदु, जय
तेज-पुंज जय, खेद-भंज जय
मम हृद-सरसि प्रफुल्ल कंज जय
श्रीधर प्रनत पुकारत जय जय
भारत जय जय, भारत जय जय

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष शुक्ल ७, सं० १९७४

जय जय भारत

जय जय भारत, जय जय भारत

१

जय बुध-वंदित, भुवि-अभिनंदित
तेज-पुंज शशि-रवि-छवि-निंदित
शोभन-विमल-हृदय-स्वच्छंदित
आरत-आरति-शमन-अतंद्रित
दिन-दिन दुगुन दिव्य द्युति धारत
जय जय भारत, जय जय भारत

२

जय जय देवा, जग-कृत-सेवा
दुख-निधि-खेवा, जन-सुधि-लेवा
सब बिधि सुंदर, महिमा-मंदिर
धीर-धुरंधर, जय सुख-कंदर
जय जय वेद पुरान पुकारत
जय जय भारत, जय जय भारत

३

प्रेम-पयोनिधि, दिव्य दयोदधि
गुन-गरिमा-मधि, सुख-सुखमाऽवधि
जयति भुवन-मनि, अखिल-रतन-खनि
भरत-नृप-धरनि, जय धनि, जय धनि

उपमा खोजि-खोजि कवि हारत
जय जय भारत, जय जय भारत

४

तव रज-कन महि अलभ जनम लहि
गुन सुमिरन करि, मन आनँद भरि
भागि सराहत, सुख अवगाहत
पुलकि निहारत, सुजस उचारत
द्विज श्रीधर तन, मन, धन वारत
जय जय भारत, जय जय भारत

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष शुक्ल ३, सं० १९७४

नौमि भारतम्

सुख-धाम, अति-अभिराम-गुन-निधि, नौमि नित प्रियभारतम्
सुठि सकल-जग-संसेव्य सुभ-थल, सकल-जग-सवा-रतम्
सुचि सुजल-सुफल-सुसस्य-संकुल, सकल-भुवि-अभिवंदितम्
नित नवल-सुऋतु-सुदृश्य-सुठि-छवि-अवलि-अवनि-अनंदितम्
धृत-प्रकृति-सरस-समृद्धि-सर्वस, सर्व-सुख-परिपूरितम्
कृत-अखिल-जग-परितोख, दूत-दुख-दोख, दुरित-सुदूरितम्
श्रम-रहित-यत्न-विनैव-अवगत-रत्न-गर्भ-वसुंधरम्

भुवि-विभव-शुभ-संदर्भ-सुंदर, नौमि भुवन-धुरंधरम्
बहु-विपिन-रम्य-रसाल-उपवन-वीथि-जाल-सुशोभितम्
नद-झील-ह्रद-सर-सरित-निर्झर-सहृद-हृदय-प्रलोभितम्
श्रुति-मधुर-स्वर-संगीत-सुख-प्रद कुंज-द्रुम-गिरि-कंदरम्
तप-पुंज-संत-समाज-संगम-ज्ञान-घन-गुन-मंदिरम्

❀ ❀ ❀

हिम-शैल शुभ्र-सुभाल-भ्राजत दिव्य-मौलि प्रभालयम्
सित-अभ्र-जाल-विशाल-साजत राज-छत्र-छटामयम्
मिलि गंग-धार-कलिंद-नंदिनि-द्वंद्व-हार-हृदार्पितम्
जुग-जानु मूल-दुकूल-मंजुल सिंधु-कूल-प्रसर्पितम्
फल-भार-नम्र-प्रफुल्ल-कानन-रत्न-राशि-प्रभासितम्
अति मंजु-आप-कलाप-निर्मल-कीर्ति-पुंज-प्रकाशितम्
रवि-चंद्र-चौंर-नछत्र-मंडित-व्योम-मंडप-छादितम्
भव-भूप-भारत-रूप जय जय नौमि विश्व-धराधिपम्

❀ ❀ ❀

कहुँ आप-पुंज-प्रताप-शब्दित-शैल-कानन-प्रांतरम्
कहुँ मंजु गान-विहंग-अलिकुल-गुंजमान-वनांतरम्
कहुँ कुल्य-नीर-निपात मर्मर झिल्लि-भीर-झणत्कृतम्
कहुँ केलि-कुंज ललाम-कोमल कंठ-काम-कणत्कृतम्
कहुँ व्योम-चुंबि-अलौघ संगत-शैल-शृंग-समुन्नतम्

कहुँ शस्य-शालि-समूह-संवृत-भूमि-निम्नतमोन्नतम्
कहुँ देवदारु-सुव्रात-वृत, सुठि-पर्वतालि-तटस्थली
कहुँ शाल-ताल-तमाल-तत सुविशाल-वन-शोभा भली
कहुँ रम्य तीर-द्रुमालि-बिंबित-स्वच्छ-नीर-सरोवरम्
कल-राजहंस-कलोल निर्मित-ऊर्मि-माल मनोहरम्
कहुँ शम्य-शून्य-नितांत-निर्जल-शुष्क-प्रांत-मरुस्थलम्
कहुँ अन्न-पूर्न-प्रशस्य-उर्वर-उर्वि-श्यामल-शाद्वलम्
कहुँ चंदनाक्त-सुमंद शीतल संचलन्मलयानिलम्
कहुँ अंशुमालि-प्रचंड-आतप-ताप-संचारितानलम्
बहु धन्य-नाम-सुतीर्थ-आश्रम-पुन्य-धाम-पवित्रितम्
शुभ-वृत्ति-सत्य-विचार-विस्तृति-व्यक्त-चारु-चरित्रितम्

❀ ❀ ❀

मनु-आदि नृपति-नृवर्य-जनु-थल, विनय-नय-अनुशासितम्
बल-वीर्य-बुद्धि-विकास-वार्द्धित-आर्यकुल-अधिवासितम्
अति-उच्च-भाव-प्रभाव-प्रकटित-प्रेम-मुनि-मन-प्रेयसम्
सत-धर्म-पर्म-पवित्र-थल, सत्त-कर्म-कृत-जग-श्रेयसम्
शुभ-शिल्प-काव्य-कलादि-कौशल-पृथिवि-प्रथम-प्रकल्पितम्
नर-जन्म-जग-उद्देश्य-प्रकटित प्रथम-परम-प्रगल्भितम्
अति-अनघ-चरित, अनन्य, अनुपम, अतुल, अमर, अदूषनम्
इति-अन्य-अन्य-अगन्य-गुन-गन-धन्य-धरनि-विभूषनम्

नित पुन्य-दर्शन-हेतु-पुनि-पुनि-भुवन-त्रय अभिलाषितम्
अति-धन्य लहि निज-जन्म-श्रीधर-हृदय प्रेम-प्रकाशितम्

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

फाल्गुन, सं० १९७०

भारताष्टक

१

भजे भारतं चारु-शोभाऽभिरामम्
शुभं शाश्वतं भारती-भव्य-धामम्
पदं पैतृकं मातृपीठं ललामम्
सदा संदधेऽहं मुदा पुण्य-नामम्

२

ध्रुवं धार्मिकं धीर-धुर्यं धरेशम्
परं प्रेम-बीजं वरं वीर-वेशम्
सुरैः संस्तुतं सुव्रतं सद्विशेषम्
भजे भारती-भासुरं भव्य-देशम्

३

लसच्छुभ्र-हैमाचलं मौलि-मालम्
लुठत्कंठ-मंदाकिनी-मंजुमालम्
बृहद्वारिधि-स्निग्ध-कल्लोल-नीरै-
रभिक्षालितं विश्व-वंद्यांघ्रिनालम्

४

बहु-प्रांतर-प्रांत-रम्यांतरालम्
पुर-ग्राम-धामाभिरामं रसालम्
दिगंताश्रितं वन्य-लावण्य-जालम्
भजेऽहं सदा भारतं श्रीविशालम्

५

स्रवत्स्रोत-निस्रोतिनी-रम्य-तीरम्
सुभूमिं सुव्योमं सुवायुं सुनीरम्
तपोभिः समुद्भूतपूतं शरीरम्
भजे तं भुवोभावुकं भावधीरम्

६

चतुर्वर्ग-धामं चतुर्धाम-धन्यम्
चतुर्धर्म-वर्णाश्रमाणां शरण्यम्
चतुर्दिक्षु रम्य-स्थली-भूरि-पुण्यम्
भजे भू-शिरो-भूषणं भू-वरेण्यम्

७

सदा सर्व-शांतिप्रदं निर्विषादम्
भव-भ्रांति-भावच्छिदं निष्प्रमादम्
सदा निर्वृतं निर्भयं निर्विवादम्
भजे भारतं सर्व-संपूज्य-पादम्

८

स्मरंतीह ये भारतं भारतीयाः

नरा योषितो भूरि भूत्वा तदीयाः
विजानंति चैने निजं भक्तिभाजम्
सदा संति ते भक्तिभाजो मदीयाः
ये पठंति नरा मर्त्या भक्त्येदं भारताष्टकम्
भारतीयत्व-संभूतममृतत्वं लभंति ते

भारत-स्तव

१

वंदे भारत-देशमुदारम्
सुखमा-सदन-सकल-सुख-सारम्
बोध-विनोद-मोद-आगारम्
द्वेष-दुरापद-क्लेश-कुठारम्

२

कीरति-कलित करनि-कमनीयम्
धीर-धुरीन धरनि-नमनीयम्
संतत-सुजन-कुमुद-वन-चंद्रम्
गौरव-गहन-गभीरमतंद्रम्

३

भाल-विशाल-हिमाचल-भ्राजम्
चरन-विराजित-अर्नव-राजम्
तंप-धृत-सहस-कोटि-करवालम्
दुसह-दुराप-प्रताप-विशालम्

४

शुचि-प्रफुल्ल-वन-वसन-रसालम्
सुरसरि-लहरि-लोल-उर-मालम्
अगनित-गगन-चुंबि-नग-शिखरम्
तरनि-अगम्य-गहन-घन-निकरम्

५

भ्रमर-मंजु-गुंजित-वन-कुंजम्
विमल-कंज-विकसित-जल-पुंजम्
सुभग-प्रांत-प्रांतर-अभिरामम्
मुनि-मन-प्रिय-प्रशांत-विश्रामम्

६

सुलभ-सुकृत-परमारथ-धामम्
परहित-सतत-निरत-निष्कामम्
थल-थल-विशद-जलाशय रुचिरम्
विमल-व्योम-बिंबित-थिर-अथिरम्

७

मन-भावन-शुचि-कानन-शोभम्
शची-शचीश-सहित-सुर-लोभम्
भूति-विभूषित-धूसर-कायम्
भूसुर-भूरि-भव्य-मन-भायम्

८

सुऋतु-सुदृश्य-सुभग-थल-पूतम्
सुजल, सुव्योम, सुवायु-विधूतम्
सुर-नर-नाग-सिद्ध-वर-अयनम्
ऋषि-मुनि-प्रथित-विनय-नय-नयनम्

९

राम-श्याम-जनकादिक-जनकम्
अपरिमेय-मनि-गन-धन-कनकम्
भव-विशुद्ध-विज्ञान-निधानम्
भुवि-प्रसिद्ध, भूलोक-प्रधानम्

१०

मम-मानस-मंजुल-नृप-हंसम्
ईश्वर-अंश अवनि-अवतंसम्
मम सुंदर-मन-मंदिर-देवम्
सत-सत-भाव-सतत-कृत-सेवम्

११

सुभट सुशील' श्रीद श्रीगेहम्
श्रीधर-ललित-निवेदित-नेहम्

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
आषाढ़ शुक्ल ६, सं० १९७४

स्वदेश-पंचक

१

स्वरूप-बोध-बोधितम् मनीषि-यूथ-मोदितम्
प्रबोध-पुंज-वर्षणम् प्रगल्भ-पुण्य-दर्शनम्
स्व-वाणि-वेश-वाससम् "स्व-राज"-वासना-वृतम्
"स्वदेशि" भाव-भावितम् भजे स्वदेश भारतम्

२

हिमाद्रि-मूर्ध-शेखरम् पयोधि-कूल-मेखलम्
महानुभाव-चेतसम् महा-प्रताप-मेधसम्
प्रभूति-भूति-धूसरम् विधूत-भूति-भूसुरम्
स्वतेज-भाव-भासुरम् भजामि भावुकेश्वरम्

३

परोपकार-कारकम् कुवृत्ति-वर्त्म-वारकम्
सुरीति-संप्रसारकम् सुधीवरं सुधारकम्
दिनेश-तेज-मंडितम् विवेक-वेद-पंडितम्
अशेष-देश-मंडनम् नमामि द्वेष-खंडनम्

४

सु-धाम-सर्ग-सुंदरम् सु-ग्राम-वर्ग-बंधुरम्
मनस्वि-प्राण-वल्लभम् स्वतः प्रमाण-संभवम्
सु-भूमि-व्योम-वीरुधम् सु-वायु-नीर-नीरदम्
सु-ऋद्धि-सिद्धि-संकुलम् भजे सु-नीति-शृंखलम्

५

कृषि-प्रभूत-संपदम् ऋषि-प्रसूत-संततिम्
सुकृत्य-पूत-चेतसम् सुकृति-सात्त्विकौजसम्
प्रवर्द्धमान-विक्रमम् मनोऽभिराम-संभ्रमम्
मदाभिमान-मंदिरम् नमामि तं निरंतरम्

६

इदं 'स्वदेश-पंचकम्' शुभं सुवृत्त-संमितम्
स्वदेश-भक्ति-भावितम् स्व-बोध-सत्त्व-संवृतम्
पठंति ये नरा मुदा शुचि-व्रताः सदाशयाः
स्वदेश-बंधु-सन्निधौ लभंति ते सुखं सदा

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
आषाढ़ शुक्ल १३, सं० १९७४

भारत-वंदना

१

प्रनमामि सुभग सुदेश भारत सतत मम मन-रंजनम्
मम देस मम सुख-धाम मम तन-प्रान-धन-जन-जीवनम्
मम तात-मात-सुतादि-प्रिय-निज-बंधु-गृह-गुरु-मंदिरम्
सुर-असुर-नर-नागादि-अगनित-जाति-जन-पद-सुंदरम्

२

जिहि कंठ लोल-कलोल-कल-रव-निरत लहरत सुरसरी
सिर-भाग सुथिर सुहाग-स्रग इव लसत हिम-पर्वत-लरी
बन-सघन-उपवन-अवलि-प्रफुलित-फलित बहु बरननु-भरी
कृषि-शस्य-सजित प्रशस्य-थल थल दूब-तृन-सुखमा खरी

३

पद-कंज-परसि पयोधि पावन धन्य निज जीवन करै
सुख पाय भागि सराहि पुनि-पुनि पुलकि मन आनँद भरै
तप-पुंज-दर्शन हेतु रवि निज-धाम तजि नित आवही
कर-कंज निज रचि मंजु-कर-मय चंद चौंर ढुरावही

४

सजि-सजि सुघर शृंगार नित जहँ प्रकृति नव छवि धारही
तिहुँ-लोक-संपति धाय गहि जिहि चरन तन मन वारही
माया नटी जिहि गोद शिशु इव मोद मुग्ध मचावही
रचना-प्रपंच-प्रभेद जाल विरंचि-वेद बतावही

५

शुभ-कर्म-धर्म-प्रवृत्ति-संभव तेज-पुंज-तपोधनम्
जग-बंधु भाव-प्रभाव-पावन प्रेम-नेम-निबोधनम्
शुचि-शील-साधु-स्वभाव-शोभित, शांत-शुद्ध-सुचेतनम्
प्रनमामि पुनि पुनि प्रनत-श्रीधर-हृदय-प्रेम-निकेतनम्

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

श्रावण कृष्ण ३०, सं० १९७४

(१९१७)

हिंद-वदना

जय देश हिंद, देशेश, हिंद
जय सुखमा-सुख-निःशेष, हिंद
जय धन-वैभव-गुण-खान हिंद
विद्या-बल-बुद्धि-निधान, हिंद
रस-खान हिंद, जस-खान हिंद
गुण-गण-मंडित विद्वान, हिंद
जय चंद्र-चंद्रिका-विमल, हिंद
जय विश्व-वाटिका-कमल, हिंद
जय सत्य हिंद, जय धर्म हिंद
जय शुभाचरण, शुभ-कर्म, हिंद
जय प्रथा हिंद, जय नेम हिंद
जय निश्चल-ईश्वर-प्रेम, हिंद
जय भाव हिंद, जय भक्ति हिंद
जय जयति विलक्षण-शक्ति, हिंद
जय शास्त्र हिंद, जय वेद हिंद
जय जय तव वर्ण-विभेद, हिंद
जय यज्ञ हिंद, जय होम हिंद
जय भूमि हिंद, जय व्योम, हिंद
जय देव हिंद, जय मनुज, हिंद

जय जय विध्वंसित-दनुज, हिंद
जय कला-कलापति-प्रमुद, हिंद
जय विकसित-मुनिजन-कुमुद, हिंद
जय मलय-मधुर-मारुती, हिंद
जय कुवलय-कल-भारती, हिंद
जय शूर हिंद, जय वीर हिंद
जय शत्रु-दमन रण-धीर, हिंद
जय जीव हिंद, जय प्राण, हिंद
जन भुक्ति मुक्ति निर्वाण, हिंद
जय विद्या-विधु-नव-उदय, हिंद
जय जयति दयामय-हृदय, हिंद
जय विश्व-विदित उद्यान, हिंद
जय जयति स्वर्ग-सोपान, हिंद
जय नगर ग्राम अभिराम, हिंद
जय जयति जयति सुखधाम, हिंद
जय असुर समर-समवेत, हिंद
जय जय प्रसिद्ध-रण-खेत, हिंद
जय सर्वस्व-उपेत, हिंद
जय जय वाणिज्य-निकेत, हिंद
जय सौम्य हिंद, जय सभ्य हिंद

जय दर्शन-देव-अलभ्य, हिंद
जय काव्य हिंद, जय छंद, हिंद
जय अद्भुत आनँद-कंद, हिंद
नागेंद्र हिंद, राजेंद्र, हिंद
जय जय बहु बार जितेंद्र, हिंद
जय तीर्थ हिंद, जय पुरी, हिंद
जय प्रकृति-ललित-माधुरी, हिंद
जय शोभा-छवि-नित-नवल, हिंद
जय धूलि-धूसरित-धवल, हिंद
जय सरसिज-मधुकर-निकर, हिंद
जय जयति हिमालय-शिखर, हिंद
जय जयति विंध्य-कंदरा, हिंद
जय मलय-मेरु-मंदरा, हिंद
जय चित्रकूट कैलास, हिंद
जय किन्नर-यक्ष-निवास, हिंद
जय शैल-सुता सुरसरी, हिंद
जय यमुना गोदावरी, हिंद
जय पावन परम पुनीत, हिंद
जय जय जग लोकातीत, हिंद
जय चतुरानन-चातुरी, हिंद

जय चमत्कार-प्राचुरी, हिंद
जय आगम-पटु-पाटवी, हिंद
जय दुर्गम बिटपाटवी, हिंद
जय उत्पाटित जग-पटल, हिंद
जय धर्म-धुरंधर अटल, हिंद
जय पंथ हिंद, वैराग हिंद
जय तीरथराज प्रयाग, हिंद
जय अवध हिंद, हरिद्वार हिंद
जय जय ब्रज-कृष्ण-विहार, हिंद
जय वृंदावन-मधुपुरी हिंद
जय गत-कर्वुर-शार्वरी, हिंद
जय सिंधु हिंद, जय वंग, हिंद
जय जय तैलंग-कलिंग, हिंद
जय राग हिंद, जय रंग हिंद
जय जय तुरंग-चतुरंग, हिंद
जय कुवचन-मुख-संपुटित हिंद
जय सूनृत-प्रियं-प्रस्फुटित हिंद
जय दलित-यवन-दल-दुष्ट हिंद
जय भुज-बल-पुष्कल-पुष्ट हिंद
जय विमल बिमल बन-माल, हिंद

जय विद्रुम, हीर, प्रबाल, हिंद
जय उज्ज्वल कीर्ति-विशाल, हिंद
जय करुणा-सिंधु कृपाल, हिंद
जय जयति कोटि भूपाल, हिंद
जय जयति वृद्ध अरु बाल, हिंद
जय जयति शास्त्र-आचार्य, हिंद
जय जयति सनातन आर्य, हिंद
जय जयति सदा स्वाधीन, हिंद
जय जयति जयति प्राचीन, हिंद
हिंद अनूपम अगम वन, प्रेम-बेल-रस-पुंज
श्रीधर-मन-मधुकर फिरत गुंजत नित नव कुंज

श्रीप्रयाग,
श्रावण, सं० १९४२

भारत-प्रशंसा

जय जय भारत विशाल, झलकत हिम-क्रीट भाल
बुधि-बल-दृग-ज्वलित ज्वाल, तेज-पुंज-धारी
सर-धनु-बर-खरग-धार, आयुध खल-दल-प्रहार
दनुज-कुल-विदार मनुज-गन-अनंद-कारी
विद्या-पीयूष-खान, बुध-जन नित करत पान
त्रिभुवन-अमृतायमान-करन, ताप-हारी

गिरिवर-भ्रूभंग-धारि, गंग-धार-कंठ-हार
सुर-पुर-अनुहार, विश्व-वाटिका-विहारी
उपवन-वन-वीथि-जाल, सुंदर सोहै पट-दुसाल
कालिमालाविभ्रमाऽलिमालिकाऽलकाऽली
अद्भुत आनंद-कंद सोभा लखि लजत चंद
चंद तें दुचंद चारु हसनि प्यारि-प्यारी
सत्य-धर्म-कर्म-निष्ठ, धीर-वीर-वर-वरिष्ठ
सौम्यता-विशिष्ट, शिष्ट-सादर-सत-कारी
उन्नत-मन अति उदार, साधन-धन-सिद्धि-द्वार
जतन-रतन-निधि अपार, दीन-दीनताऽरी
सुर-तरु कै कामधेनु, कै हर मुख माँग-देनु
धंन-पति-भंडार ऐन, जासु जग भिखारी
यूरप, अफगान-पाल, जाचक कीन्हें निहाल
विश्वपाल, कै गुपाल नटवर गिरिधारी
कै यह कोई कमल-फूल कोमल आनंद-मूल
धूल हेत रूस हूस, भौंर भीर भारी
कै हरि-चरनारविंद-मेप्रचित-मकरद-बिंदु-
सिंचित सुख-बाग हिंद, श्रीधर बलिहारी

श्रीप्रयाग,
भाद्रपद शुक्ल ३, सं० १६४२

भारत-श्री

जय जय जगमगित जोति, भारत भुवि श्री उदोति
कोटि चंद मंद होत, जग-उजासिनी
निरखत उपजत विनोद, उमगत आँनद-पयोद
सज्जन-गन-मन-कमोद-बन-विकासिनी
विद्याऽमृत मयूख, पीवत छकि जात भूख
उलहत उर ज्ञान-रूख, सुख-प्रकासिनी
करि करि भारत विहार, अद्भुत रंग रूपि धारि
संपदा-अधार, अब युरूप-बासिनी
स्फूर्जित नख-कांति-रेख, चरन-अरुनिमा विसेख
झलकनि पलकनि निमेख, भानु-भासिनी
अंचल चंचलित रंग, झलमल-झलमलित अंग
सुखमा तरालित तरंग, चारु-हासिनी
मंजुल-मनि-बंध-चोल, मौक्तिक लर हार लोल
लटकत लोलक अमोल, काम-शासिनी
उन्नत अति उरज-ऊप, बिलखत लखि विविध भूप
रति-अवनति-करं-अनूप-रूप-रासिनी
नंदन-नंदन-विलास, बरसत आनंद-रासि
यूरप-त्रय-ताप-नासि-हिय-हुलासिनी
भारत सहि चिर वियोग, आरत, गत-राग-भोग

श्रीधर सुधि भेजि तासु सोग्र-नासिनी

श्रीप्रयाग,

भाद्र शुक्ल १, सं० १९४२

भारतोत्थान

भारत, चेतहु नींद निवारौ
बीती निशा उदित भए दिन-मनि, कबकौ भयौ सकारौ
निरखहु यह शोभा-प्रभात वर, प्रभा भानु की अद्भुत
किहि प्रकार क्रीड़ा-कलोल-मय विहग करहिं प्रात-स्तुत
बिनस्यौ तम-परिताप पाप सँग नभ नखत्र बिलगाने
निशिचर खग भूचर तजि तजि सब श्रमन भये इक आने
विकसे कुमुद, मधुर-मारुत-मद-सने भौंर गुंजारत
बाला, नवल-कमल-कोमल-वपु, उठि निज केश सवारत
लगे सबै निज काज परस्पर प्रेम-पाग-रस चाखन
देखौ बरति रह्यौ आँनद-सुख, उठो खोलि दोउ आँखन
गहरी नींद परे मति सोवहु, बात हमारी मानहु
"सोय खोय जागत पावत" जग-कहन सत्य अनुमानहु

श्रीप्रयाग,

माघ कृष्ण, ७, १९३९

प्रेम अपनों ही पर कर रे

१

प्रेम अपनों ही पर कर रे

तू ऐ मेरे मन मान, प्रेम अपनों ही पर कर रे

२

अपनों का कर बार बार धर,

अपनों का घर बार बार भर,

अपनों से डर बार बार, अपनों ही पर मर रे

प्रेम अपनों ही पर कर रे

३

अपनों ने अपने पहँचाने

बढ़ा अपनपा हुए दिवाने

अपनों सा नहिं कोई आन, अपनों ही को बर रे

प्रेम अपनों ही पर कर रे

४

अपने ही सब गुन की खान हैं,

अपने ही प्रानों के प्रान हैं

अपनों का कर गान, तान अपनों ही पर भर रे

प्रेम अपनों ही पर कर रे

श्रीपद्म-कोट,

१-११-१८

प्रेम-संगीत

१

घर घर गवै प्रेम-संगीत
फवै प्रेम की ध्वजा फहरती घर घर प्रभा पुनीत

२

परमपुरातन, सदा सनातन, भारत की जो रीति
सुकृत नीति की, अमिट प्रीति की, उसमें बढ़े प्रतीति
घर घर गवै प्रेम-संगीत

३

धर्म कर्म की मर्म-भूमि में मिलै प्रेम को जीत
फलै न निपट कपट-पट-लिपटी, शठ-लंपट-हठ नीत
घर घर गवै प्रेम-संगीत

आपद्म-कोट,
१५-२-१६१६

अपना मोल

१

मन तू जान अपना मोल
आँच में तप साँच की, तब जाँच, तब कर तोल

२

खोलकर अंदाज कर, खुद बार बार टटोल

देख तो सब ठोस है, या ढोल में है पोल
मन तू जान अपना मोल

३

मोल अपना जान यों, पर मान है अनमोल
हानि इस अनमोल की जो सह सकै तो बोल
मन तू जान अपना मोल

श्रीपद्म-कोट,
२१-१-१६१६

सत्त्व को निर्धार

१

अपने सत्त्व को निर्धार
लक्ष्य रखकर तत्त्व पर कर तथ्य तथ्य विचार

२

क्या है तेरे सत्त्व का अस्तित्व या आधार
तत्त्व क्या अस्तित्व का है, वस्तु क्या है सार
अपने सत्त्व को निर्धार

३

फेर दृग हर तर्फ़, फिर फिर देख दृष्टि पसार

क्या न तेरेहि सत्त्व का सब तर्फ़ है इज़हार ?
अपने सत्त्व को निर्धार

श्रीपद्म-कोट,

११-१-१६

भारत-सुत

ए हो ! नव युववर, प्रिय छात्र-वृंद
भारत-हृदि-नंदन, आनंद-कंद
जीवन-तरु-सुंदर-सुख-फल, अमंद
भारत-उर-आशा-आकाश-चंद
आरज-गृह-गौरव-आधार-थंब
भारत-भुवि-सर्वस-प्रानावलंब
तुमहीं तिहि तन, मन, धन, रजत-जोति
हीरा, मनि, मरकत, मानिक्य, मोति
तुमहीं तिहि आतम-अंतर-शरीर
प्राणाधिक-प्रियतम सुत, धीर वीर
तुम्हरे नव-विकसित सुठि सबल अंग
उन्नत मति चंचल चित, चपल ढंग
शैशव-गुन-संभव, नव नव तरंग
नव वय, नव विद्या, नव-युव-उमंग

बाढ़हु भुवि स्वर्गिक सेवा के हेतु
फहरै जग भारत कीरत कौ केतु

श्रीप्रयाग,
माघ, १६६६

सती-समाज

१

जयति भुवि भारत-सती-समाज
परम पुनीत प्रेममय जिनका जाग रहा जग राज

२

जय जग-ज्योति, जगत-संजीवनि, जय जग-लाज-जहाज
शुचिता-सीम, पुण्य-पथ-प्रेमिनि, नेमिनि, नेह-निवाज
जयति भुवि भारत-सती-समाज

३

जिनका सुखद सहाय पाय जग साजै सकल सुकाज
सुजस गाय, श्रीधर-उर-अंतर आनंदित अति आज
जयति जग भारत-सती-समाज

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष शुक्ल ६, सं० १६७५

शिक्षक भारत

१

भारत हमारा जग को क्या क्या सिखा रहा है
उसके सुपुत्र सारे संसार के हैं प्यारे

पूरन प्रशांत पावन जीवन की ज्योति धारे
संसार भर के सेवक, संसार भर से न्यारे
उनके पवित्र मन का दर्पन दिखा रहा है
भारत हमारा जग को क्या क्या सिखा रहा है

२

"दुष्कृत कोई न कर तू, करते सुकृत न डर तू
"हर कर किसी के धन को अपना भवन न भर तू
"पर-हित के साधने में कोई न कर कसर तू"—
शुभ कर्म की तरफ़ यों सबको झुका रहा है
भारत हमारा जग को क्या क्या सिखा रहा है

३

"कर न्याय की न हिंसा, हे नर न हो नृशंसा
"धर सत्य की सुपंथा, होकर निडर, 'निसंसा'
"भर ले हृदय-भवन में भगवान की प्रशंसा"—
अनमोल सत-वचन का अम्मृत चखा रहा है
भारत हमारा जग को क्या क्या सिखा रहा है

४

भारत का जग ऋणी है, यह जग-शिरोमणी है
शुचिता में सौम्यता में, दृढ़ता में अग्रणी है
दर्शक है पुण्य-पथ का, कर्मण्य है, प्रणी है

सद्धर्मता के धन की निधि को रखा रहा है
भारत हमारा जग को क्या क्या सिखा रहा है

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण १, सं० १९७५

स्वराज-स्वागत (१)

[भारत की ओर से]

आओ आओ तात, अहो मम प्राण-पियारे
सुमति मात के लाल, प्रकृति के राज-दुलारे
इते दिननतें हती तुम्हारी इतै अवाई
आवत आवत अहो इती कित देर लगाई
आओ हे प्रिय, आज तुम्हें हिय हेरि लगाऊँ
एक बेर जग माहिं भागि निज फेरि जगाऊँ
प्रेम-दृगन सों पोंछि पलक पाँवड़े बिछाऊँ
आनँद-अँसुअन अंक लाय पग-पंक छुड़ाऊँ
हिय-सिंहासन सज्यौ यहाँ प्रिय आय विराजौ
रंग-महल पग धारि सुमंगल-सोभा साजौ
तहाँ तुम्हें नित पाय प्रेम-आरती उतारूँ
सहित सबै परिवार प्रान धन तन मन वारूँ
माथे देउँ लगाय बड़ौ सौ स्याम डिठौना

ओखी दीठि न परै, दोख कछु करै न टौना
राखौ यहाँ निवास निरंतर ही अब प्यारे
यातें हमहूँ तात अंत लों रहैं सुखारे

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण १३, सं० १६७४

स्वराज-स्वागत (२)

[भारत की ओर से]

१

आजा मेरे प्यारे लाल

मेरे लाल आरे लाल
एरे लाल प्यारे लाल

मेरे नैन के तारे लाल
मेरे प्राण के प्यारे लाल
आजा मेरे प्यारे लाल

२

देखूँ तेरा प्यारा मुखड़ा भूलूँ जी का सारा दुखड़ा
पर्दा फटै दर्द का सुकड़ा पिरथी बने स्वर्ग का टुकड़ा

भोली सूरत, भोली चाल
आजा मेरे प्यारे लाल

३

आजा आजा प्यारा राजा
घर है साजा तेरे काजा
तेरा बाजा जग में गाजा
तू सिरताजों का सिरताजा
मेरे राजदुलारे लाल
आजा मेरे प्यारे लाल

४

तू ही मेरा सर्वस सारा तू ही मेरा प्रान-अधारा
तू अँधियारे का उजियाला, इज़्ज़त हुर्मत का रखवाला
तू ही दौलत, तू ही माल
आजा मेरे प्यारे लाल

५

तुझमें अपना प्रान रमाऊँ तुझमें अपना ज्ञान जमाऊँ
तुझको अपना इष्ट बनाऊँ तन से मन से बलबल जाऊँ
तू मेरा गोविंद गुपाल
आजा मेरे प्यारे लाल

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण ११, सं० १९७४

भारत-हितकारी

१

जय जय भुवि-भार-हरन, भारत-हितकारी
भारत-भुवि-भार-हरन, आरत-उद्धार-करन
जय जय संसार-सरन, असरन-दुख-हारी
जय जय भुवि-भार-हरन, भारत-हितकारी

२

प्रथमहि वसुदेव-सुअन, त्रिभुवन-गति-ज्ञान-भुअन
गोपी-जन-प्रान-रमन, वृंदावन-चारी
नट-वर-वपु, केशि-सुदन, केशव, भव-क्लेश-कदन
निज-जन-दुख-द्वेष-निधन, बुध-जन बलिहारी
जय जय भुवि-भार-हरन, भारत-हितकारी

३

तदुपरि मर्याद-धाम, रघुकुल-शोभाभिराम
पावन-गुन-ग्राम, राम, रावन-संहारी
तैसे हि श्रीबुद्ध-देव, बहु-विधि-कृत-जगत-सेव
भगवत-अवतार एव, दया-धर्म-धारी
जय जय भुवि-भार-हरन, भारत-हितकारी

४

त्यों नृप विक्रम, अशोक, कीरति-सुरभित-त्रिलोक
दीने अघ-पुंज रोकि, पुण्य-डोर डारी

शंकर, नानक, जुगिंद, त्यों ही श्रीगुरु गुविंद
अंतिम मुनि दयानंद, सुमिरत सुख भारी
जय जय भुवि-भार-हरन, भारत-हितकारी

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण ६, सं० १९७४ (1917)

हिंदी-हितकारी

१

धनि धनि ध्रुव हिंद-सुअन, हिंदी-हितकारी
विद्या-गुन-ज्ञान-सुमन, कविता-मधु-पान-प्रवन
गुनियन-सनमान-भवन, सुमिरत सुख भारी
धनि धनि ध्रुव हिंद-सुअन, हिंदी-हितकारी

२

प्रथमहि वरदायि चंद, भाषा-कोविद-कविंद
कविता-आकाश-चंद, कलित-कला-धारी
दूजै द्विज-धूरि-गन्य, कवि-कुल-रवि, सूर धन्य,
भक्तन-मनि-मूरधन्य रसिकन-मन-हारी
धनि धनि ध्रुव हिंद-सुअन, हिंदी-हितकारी

३

तदुपरि श्रीतुलसिदास, रघुपति-पद-प्रेम आस
अनुपम-प्रतिभा-प्रकास-राम-चरित-कारी

श्रीयुत पुनि भारतेंदु कवि-मनि,धनि हरिश्चंद,
अवतरि-हरि-जिमि-गयंद-भाषा उद्धारी
धनि धनि ध्रुव हिंद-सुश्रन, हिंदी-हितकारी

४

भूषण, मतिराम शेष, केशव कविवर विशेष,
जिनकी सरसुति सुवेश सरसति जग-प्यारी,
त्यों पुनि आनिहु अनेक, जिनकी जग विदित टेक,
बिनवत तिन एक एक श्रीधर बलिहारी
धनि धनि ध्रुव हिंद-सुश्रन, हिंदी-हितकारी

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण २, सं० १६७४

बात यह क्या रे

१

है तेरा ऐसा हाल, बात यह क्या रे
क्या तुझमें कुछ शक्ति नहीं है
क्या तुझमें कुछ युक्ति नहीं है
क्या तुझमें कुछ बुद्धि नहीं है
क्या तुझमें कुछ सिद्धि नहीं है
तिस पर भी तू है क्यों निषिद्ध, हे प्यारे
है तेरा ऐसा हाल, बात यह क्या रे

बिना किए दुख दूर एक छिन सुखित नींद नहिं सोते हो
सजग होय जग-बीच प्रेम का अटल राज्य फैलाते हो
प्रेम-ध्वजा के तले सकल जगती-तल को मिल लाते हो
दया-सहित, निर्दय-हृदयों में सहृदयता सरसाते हो
निर्जल, निपट, मरुस्थल ऊपर अमृत-वारि बरसाते हो
मित्र, बंधु, सुत, आदि प्रेम के जो प्रिय पात्र तुम्हारे हैं
माता, पिता, आदि ईश्वर-सम जो सुपूज्य और प्यारे हैं
इन सब पर सर्वस्व वार निज-जीवन धन्य बनाते हो
निज-परता का अज्ञ उरों से हठ और भेद हटाते हो
जो ऐसा नहिं करते हो तो अहो कहो क्या करते हो
चौरासी कर पार व्यर्थ किस अर्थ देह नर धरते हो

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
आषाढ़ शुक्ल ६, सं० १९७४ 1917

सुंदर भारत

१

भारत हमारा कैसा सुंदर सुहा रहा है
शुचि भाल पै हिमाचल, चरणों पै सिंधु-अंचल
उर पर विशाल-सरिता-सित-हीर-हार-चंचल
मणि-बद्धनील-नभ का विस्तीर्ण-पट अचंचल
सारा सुदृश्य-वैभव मन को लुभा रहा है

भारत हमारा कैसा सुंदर सुहा रहा है

२

उपवन-सघन-वनाली, सुखमा-सदन, सुखाली
प्रावृट के सांद्र घन की शोभा निपट निराली
कमनीय-दर्शनीया कृषि-कर्म की प्रणाली
सुर-लोक की छटा को पृथिवी पे ला रहा है
भारत हमारा कैसा सुंदर सुहा रहा है

३

सुर-लोक है यहीं पर, सुख-ओक है यहीं पर
स्वाभाविकी सुजनता गत-शोक है यहीं पर
शुचिता, स्वधर्म-जीवन, बेरोक है यहीं पर
भव-मोक्ष का यहीं पर अनुभव भी आ रहा है
भारत हमारा कैसा सुंदर सुहा रहा है

४

हे वंदनीय भारत, अभिनंदनीय भारत
हे न्याय-बंधु, निर्भय, निर्बंधनीय भारत
मम प्रेम-पाणि-पल्लव-अवलंबनीय भारत
मेरा ममत्व सारा तुझमें समा रहा है
भारत हमारा कैसा सुंदर सुहा रहा है

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण ७, सं० १९७५

स्वदेश-विज्ञान

जब तक तुम प्रत्येक व्यक्ति निज सत्त्व-तत्त्व नहिं जानोगे
त्यों नहिं अति पावन स्वदेश-रति का महत्त्व पहचानोगे
जब तक इस प्यारे स्वदेश को अपना निज नहिं मानोगे
त्यों अपना निज जान सतत-शुश्रूषा-व्रत नहिं ठानोगे
प्रेम-सहित प्रत्येक वस्तु को जब तक नहिं अपनाओगे
समता-युत सर्वत्र देश में ममता-मति न जगाओगे
जब तक प्रिय स्वदेश को अपना इष्ट-देव न बनाओगे
उसके धूलि-कणों में आत्मा को समूल न मिलाओगे
पूत पवन जल भूमि व्योम पर प्रेम-दृष्टि नहिं डालोगे
हो अनन्य-मन प्रेम-प्रतिज्ञा-पालन-व्रत नहिं पालोगे
तन मन धन जन प्रान देश-जीवन के साथ न सानोगे
स्वोपयुक्त विज्ञान ज्ञान का सुखद वितान न तानोगे
तब तक क्योंकर देश तुम्हारा निज स्वदेश हो सकता है
स्वत्व उसी का रह सकता है रख उसको जो सकता है

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण, १९७४

प्रेममय संसार

१

प्रेममय है सारा संसार

प्रेमहि का सारा प्रसार है, मत कह इसे असार

२

प्रेम वार है, प्रेम पार है, प्रेमहि है मँझधार
बेड़ा पड़ा प्रेम-सागर में, प्रेम से होगा पार
प्रेममय है सारा संसार

३

प्रेमहि है स्वारथ, परमारथ, सकल-पदारथ-सार
प्रेम बिलग जो है तेरे मन में वो है प्रेम-विकार
प्रेममय है सारा संसार

४

हो जा निडर, छोड़ दे गड़बड़, पकड़ प्रेम की धार
प्रेम के बल से केवल होगा, निबल, तेरा निस्तार
प्रेममय है सारा संसार

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
कार्त्तिक कृष्ण ४, सं० १९७५

भारत-गगन

१

निरखहु रैनि भारत-गगन
दूरि दिवि द्युति पूरि राजत, भूरि भ्राजत-भगन

२

नखत-अवलि-प्रकाश पुरवत, दिव्य-सुरपुर-मगन
सुमन खिलि मंदार महकत अमर-भौनन-अँगन
निरखहु रैनि भारत-गगन

३

मिलन प्रिय अभिसारि सुर-तिय चलत चंचल पगन
छिटकि छूटत तार किंकिनि, टूटि नूपुर-नगन
निरखहु रैनि भारत-गगन

४

नेह-रत गंधर्व निरतत, उमग भरि अँग अँगन
तहाँ हरि-पद-प्रेम पागी, लगी श्रीधर लगन
निरखहु रैनि भारत-गगन

श्रीप्रयाग,
आश्विन, १९६९

सफल सुनिश्चित

जहाँ विश्व-मात्र के विषैं प्रेम-मय
आत्मिक भाव अधिष्ठित है
जहाँ व्यक्ति व्यक्ति के बीच नेह-
निजता-संबंध घनिष्ठित है

जहाँ निज-परता-भ्रम-शून्य, द्वेष-
दूषित, दुर्भाव बहिष्कृत है
जहाँ सकल सुखद साहाय्य हेतु
प्रति-हृदय, प्रवृत्ति परिष्कृत है
जहाँ केवल अपने अधम स्वार्थ का
दास कदापि न कश्चित है
बस वहाँ धन्य नर-जन्म, तथा नर-
जीवन सफल, सुनिश्चित है

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
कार्त्तिक, सं० १९७२

हित-अनहित

समझ मन रे मूरख नादान
अपना और पराया, जग में, हित अनहित पहचान
अपनों का तुझे ज्ञान नहीं है, औरों पर है ध्यान
जिनको कुछ परवाह नहीं तेरी, उन पर तू कुरबान
समझ मन रे मूरख नादान
अपनों और परायों में जो रखता ग़लत गुमान
खाता ख़ता एक दिन भारी खोता सारी शान
समझ मन रे मूरख नादान

हित अनहित की समझ समस्या हो जा सजग, सुजान
अगर पार करना हो जीवन का अपार मैदान
समझ मन रे मूरख नादान

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
भाद्रपद शुक्ल १५, सं० १९७५

प्यारा हिंदुस्तान

कहाँ है कोई ऐसा स्थान। जगत में जैसा हिंदुस्तान
हमारा प्यारा हिंदुस्तान। जगत से न्यारा हिंदुस्तान

१

कि जिसको प्रेमी श्रीभगवान। करैं नित नूतन प्रेम-प्रदान
अतः कर बड़ा प्रेम-अभिमान। प्रेम की रखता हो जो शान
पड़ी हो जिसे प्रेम की बान
कहाँ है कोई ऐसा स्थान। जगत में जैसा हिंदुस्तान
हमारा प्यारा हिंदुस्तान। जगत से न्यारा हिंदुस्तान

२

धर्म का बहता हो जहाँ स्रोत। कर्म का पंथा हो प्रद्योत
भक्ति की जाग रही हो जोत। भुक्ति का भी हो ओत-प्रोत
अतः हो भुक्ति-मुक्ति की खान
कहाँ है ऐसा कोई स्थान। जगत में जैसा हिंदुस्तान
हमारा प्यारा हिंदुस्तान। जगत से न्यारा हिंदुस्तान

३

दुलारा जगत-पिता का बाल । प्रकृति माता का प्यारा लाल
पुंज शुचिता का मंजु विशाल । सुरुचि, सुंदरता-सिंधु, रसाल
दरस कर सुर-पुर भूला मान
कहाँ है ऐसा कोई स्थान । जगत में जैसा हिंदुस्तान
हमारा प्यारा हिंदुस्तान । जगत से न्यारा हिंदुस्तान

४

बनैं हम सेवक इसके वीर । धृष्ट, निर्भीक, धीर, गंभीर
हरैं जो देखैं इसकी पीर । न पड़ने देवें दुख की भीर
हमारा है यह तन मन प्रान
कहाँ है कोई ऐसा स्थान । जगत में जैसा हिंदुस्तान
हमारा प्यारा हिंदुस्तान । जगत से न्यारा हिंदुस्तान

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष शुक्ल ६, सं० १९७५

भारत-आरती (१)

१

जय भारत, जय भारत, जय मम प्राण-पते
जय संसार-शिरोमणि, करुणाऽऽगार-मते

२

जय जय तीस-कोटि-जन-प्रतिपालन-कर्ता
अगनित-कोटि-चराऽचर-भर्ता, दुख-हर्ता

३

भाल-विशाल-चमत्कृत सित हिम-गिरि राजै
परसत बाल प्रभाकर हेम-प्रभा भ्राजै

४

ऋषि-मुनि-पुण्य-तपोनिधि, तेज-पुंज-धारी
सब विधि अधम-अविद्या-भव-भ्रम-तम-हारी

५

जय जय वेद-चतुर्मुख, अखिल-भेद-ज्ञाता
सु-विमल-शांति-सुधानिधि, मुद-मंगल-दाता

६

विलसति कंठ-विहारिनि, पावनि, श्री-गंगा
उपवन-विपिन-अलंकृत शोभित शुचि अंगा

७

उमगत अगम पयोनिधि, चरन-कमल-सेवी
सुलभ सुहाग सजावति प्रनत प्रकृति देवी

८

सुथल, सुव्योम, सु-वारिद, सु-विमल-जल-सरिता
सु-पवन, अवनि मनोहर, बल-वैभव-भरिता

९

जय जय विश्वविदांवर, जय विश्रुत-नामी
जय धृति धर्म-धुरंधर, जय श्रुति-पथ-गामी

१०

अजित, अजेय, अलौकिक, अतुलित-बल-धामा
पूरन-प्रेम-पयोनिधि, जय शुभ-गुन-ग्रामा

११

हे प्रिय, पूज्य परम मम, नमो नमो देवा
विनवत तीस कोटि जन, ग्रहन करहु सेवा

१२

श्रीभारत-शुचि-आरति, जग-मंगल-करनी
मंजुल-मधुर-पद-ध्वनि, बुध-जन-मन-हरनी

१३

पुनि पुनि, प्रेम-समन्वित, जो कोई गावै
सुलभ, स्वदेश-सहायक, शुभ गति गति पावै

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
श्रावण शुक्ल १२, सं० १९७४

भारत-आरती (२)

जय जय भारत हे
जय भारत, जय भारत, जय जय भारत हे

जयति जगत-सेवा-हित-सुकृत-सदा-रत हे
जयति जयति जग-नागर, जय गुन-आगर हे
जय शोभा के सागर, जगत-उजागर हे
जय आरत-आरति-हर, जय भारति-घर हे
जय सत-मारग-पग धर, श्रुति-पारग-वर हे
जय जय जग-जागृति-कर, प्रेम-प्रजागर हे
जय जय सदय-हृदय-धर, जय करुनाकर हे
जय सुजान, गुन-सुंदर, जय सुख-कंदर हे
जयति वीरता-मंदिर, धीर-धुरंधर हे
जय जग-द्वेष-क्लेश-हर, सुमति-मनोहर हे
जय जय तपोवेश-धर, अघ-अशेष-कर हे
जय नर-जन्म-सफल-कर, पुन्य-पुंज-वर हे
जय जय शांत, स्वनिर्भर, पर-अशांति हर हे
जय जय ब्रिटन-सुहृद्वर, प्रनय-पयोधर हे
बिनय-विनत, अविनय-अरि, प्रिय-सेवनपर हे

❀ ❀ ❀

उन्नत-भाल-विराजित-चारु-हिमाचल हे
प्रनत-पयोधि-प्रसर्पित-पद-तल-अंचल हे
धृत-उज्ज्वल-सरिता-सर-हीर-हार-उर हे
जय रवि-प्रभा-प्रभासित-तप-भा-भासुर हे

उपवन विपिन-सघन-तति-सुछवि-प्रवर्तित हे
विधु-मरीचि-चय-चर्चित,जय बुध-अर्चित हे
श्रीहरि-चरन-सरज-रज-रसिक-भृंग-वर हे
जय जय सुजन-संग-कर, शुचि-प्रसंग-पर हे
जय तव जगत, बद्ध-कर, सुजस उचारत हे
श्रीधर, प्रनत, प्रान धन तन मन वारत हे
जय जय भारत हे
जय भारत, जय भारत, जय जय भारत हे

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
मार्गशीर्ष कृष्ण ६, सं० १६७५

प्रेम-विचार

१

झेंपना छोड़ो अब तुम यार
आज भी छिप खिसके जाते थे, छाँड़ गली, घर, द्वार !

२

जानो हो कि मित्र हैं आए मिलने चौथी बार,
अब के भी डरते हो करते उनका कुछ सत्कार
झेंपना छोड़ो अब तुम यार

३

चलो, मिलो, बैठो और बोलो शब्द प्रेम के चार

प्रेम से आए हैं प्रेमी जन करने प्रेम-विचार
झेंपना छोड़ो अब तुम यार

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
११-१-१६१६

"सर्वं खल्विदं ब्रह्म"

दृष्टि के आगे पड़ा सृष्टि का यह जो बड़ा पसारा है
क्या तुमने इसकी बातों को प्यारे कभी विचारा है ?
है यह क्या, क्यों हुआ, रहेगा कब तक, क्या निर्धारा है
क्या यह कभी बदलता है, या रहै एक-सा सारा है
ऐसी बातों के विचार में क्या तुमको रस आता है
अथवा क्या यह कभी चित्त में चंचलता कुछ लाता है
बुधजन इसे सदैव दैव-माया का खेल बताते हैं
पता लगाते रहते हैं, ग़ोते खाते, चकराते हैं
नित नूतन रहता है प्रश्न यह यद्यपि परम पुराना है
मतवाला हो करके मूढ़ नर इस पर बना दिवाना है
कोई इसको निपट भ्रांति-मय मिथ्या कपट बताता है
बाज़ीगर का खेल कोई, जो नहीं समझ में आता है
माना—है यह खेल, निपट धोखा-मय भूल-भुलैया है
माया-नटी अनादि काल से इसकी विकट खिलैया है

पर यह सारा खेल सभों को भाता या कि न भाता है
क्या इसमें आनंद सभी को आता या कि न आता है
जब तुमको इस विकट खेल में शामिल रहना पड़ता है
जो शामिल नहिं रहो एकदम सारा खेल बिगड़ता है
जब कि तुम्हारे सुख-दुःखों की इसी खेल में सत्ता है
जन्म-मृत्यु और हानि-लाभ और लघुता और महत्ता है
दुख पाकर सुख भी अवश्य जब तुम्हें इसी में मिलता है
त्यों जीवन का सुमन स्वर्ग-सुख से सुरभित हो खिलता है
तब निश्चय वह लोग विश्व को मिथ्या जो बतलाते हैं
तथा दुःख की बिभीषिका से डर करके घबराते हैं
सुख की मरीचिका के पीछे दिन-दिन दौड़ लगाते हैं
शोचनीय हैं, बड़ी भूल करते हैं, धोखा खाते हैं
जैसा सुख वैसा ही दुख भी जग का एक मसाला है
दोनों के बिन मेल जीस्त का कढ़ कहिं सकै कसाला है
विना दुःख की कडुवाहट के सुख में रस नहिं आता है
विना तिक्त परिपाक शाक में ज्यों नहिं स्वादु समाता है
जो जग में सुख नहीं मिला तो और कहाँ पर पाओगे
पड़ संकल्प-विकल्प-जाल में जीवन अल्प गँवाओगे
जैसा सुख-दुख-मय सारा है वैसा ही बस रहने दो
जीवन के अनुकूल प्रकृति के रस प्रवाह को बहने दो

है यह सब आनंद ब्रह्म-मय तत्त्व जो तुम इसको जानो
अपना और इसका अखंड वास्तव अभेद जो पहचानो
दुख केवल मिथ्या एक भ्रम है नहिं इसकी कुछ सत्ता है
सुख-मय-ब्रह्म, ब्रह्म-मय है जग, त्यों जग-मय सुख-वत्ता है
उस सुख-मय जीवन की सत्ता भारत से मत जाने दो
स्वतंत्रता-युत सत्वर उसको अपना घर अपनाने दो
उसमें जीवन डाल शुद्ध तन-मन से तन्मय हो जाओ
करो शांति-सुख-भोग दुःख कोई प्रकार का मत पाओ

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

१-१२-१९१७

प्रेमी को पहचान

१

प्रेम तू प्रेमी को पहचान
गिन ले कौन-कौन है प्रेमी, कौन-कौन है आन

२

एक एक से खिंचा खड़ा है, मचा घोर घमसान
प्रेम-पारटी बचा, दौड़ तू, प्रेम-ध्वजा ले तान

३

मत सटपटा सटा ले कटि से, तरकस उठा कमान

चट दे हटा द्रोह के दल को, मिटा मोह का मान
प्रेम तू प्रेमी को पहचान

श्रीपद्म-कोट;
१४-११-१६१८

अमर पदारथ

प्रेम से आपा जोड़ रे मूरख, अमर पदारथ पावेगा
द्वेष का स्यापा तोड़ रे लीचड़, नहिं आपा मिट जावेगा
आपा अटल प्रेम का पल में जग-भर में भर जावेगा
जहाँ पड़ेगी नज़र एक ही नज़र नज़ारा आवेगा
पल-भर ही को लगा परब है, पल बीते टल जावेगा
टलने न दे, नहीं फिर नाहक़ कर मल-मल पछतावेगा

वैदिक-जीवन-आश्रम,
देहरादून, २२-६-१६१८

प्रेम की बान

प्रेम कर अपनों ही से प्रान
सबसे बड़ा, बड़े से भी बढ़, अपनों ही को मान

२

अपनों से जो काम सरेगा कोइ न करेगा आन

जिसने तेरा काम करा नहिं उसे न अपना जान
प्रेम कर अपनों ही से प्रान

३

अपना जान माल तन मन कर अपनों पर क़ुरबान
मान उन्हीं को खान प्रेम की, डाल प्रेम की बान
प्रेम कर अपनों ही से प्रान

श्रीपद्म-कोट,

३-११-१९१८

सावधानी

तू प्यारे कहना मान, अभी मत चल रे।
गहरा दरिया, नाव पुरानी,
चल रहा अंधड़, चढ़ रहा पानी,
औघट घाट, थाह अन-जानी,
केवट कर रहा आना-कानी,
मत होवै नादान, जिद्द से टल रे

२

थका हुआ है, कुछ सुस्ता ले,
पता पार का कुछ पुछवा ले,

अपना बेड़ा आप बना ले,
क्यों पड़ता गैरों के पाले,
होगा जल्द उतार आज या कल रे ;
तू प्यारे कहना मान, अभी मत चल रे ।

श्रीपद्म-कोट,
१६-१२-१६१७

ऐसा नहीं भला रे

ऐ प्यारे तेरा हाल आज यह क्या रे
कल तक तू ख़ूब भला था,
चिहरे पर नूर खिला था,
क्या पड़ा आज दुख भारी
जो बिगड़ी सूरत सारी
दे सारी अपनी बात साफ़ बतला रे

२

क्यों बार-बार रोता है,
रोता है फिर सोता है,
रोने से क्या होता है,
सोता है सो खोता है,

रोना और सोना ऐसा नहीं भला रे
ऐ प्यारे तेरा हाल आज यह क्या रे

श्रीपद्म-कोट,
२०-१२-१९१७

सोच का मुक़ाम

शुरू भी हुआ न तेरा काम।
मनसूबा करते दिन डूबा, हुई सुबह से शाम।

२

आठौ जाम सोच करने से सूख गया तेरा चाम
फिर भी रहा सोच ही करता, सोच का यही मुक़ाम
शुरू भी हुआ न तेरा काम।

३

शुरू-शुरू में शोर मचाया, सोचा नहिं अंजाम
समझ गए, तेरी समझ है कैसी, सभी ख़ास और आम
शुरू भी हुआ न तेरा काम।

श्रीपद्म-कोट,
१३-११-१९१८

रोग तेरा क्या रे

ऐ रोगी तू पहचान रोग तेरा क्या रे
तू आयँ-बायँ है बकता,
कुछ बात समझ नहीं सकता
तेरा घबराना नहिं रुकता
तेरा दिल हर वक़्त धड़कता
तैंने घरवालों पर डाली एक बिपदा रे

२

तू अपना रोग न जानै,
औरों की बात न मानै,
हरदम अपनी ही तानै,
नहिं हैगा होश ठिकानै,
तेरा बिगड़ चला है केस हाय बेचारे
ऐ रोगी तू पहचान रोग तेरा क्या रे

श्रीपद्म-कोट,
२०-१२-१९१७

मनूजी

म नूजी तुमने यह क्या किया ?
किसी को पौन, किसी का पूरा, किसी को आधा दिया

२

सरस प्रीति के थल में बोया बिस-अनीति का बियाँ
लुब्ध पाप का, क्षुब्ध शाप का स्यापा सिर पर लिया
मनूजी तुमने यह क्या किया ?

३

और अधिक क्या कहूँ बापजी, कहते दुखता हिया
जटिल जाति का, अटल पात का, जाल है किसका सिया ?
मनूजी तुमने यह क्या किया ?

श्रीपद्म-कोट,

७-१२-१६१८

अपनी ओर निहार

प्रेम तू अपनी ओर निहार।
तुझमें मुझमें अंतर क्या है प्यारे ज़रा विचार

२

क्या जो तू है वही न मैं हूँ, क्या मैं तू नहिं यार
नहिं समझै तो नासमझी है, या है समझ-विकार
प्रेम तू अपनी ओर निहार।

३

तूँ ही मैं, मैं ही तू, मैं और तू ही तो संसार

कस ले ज़रा केमरा को कुछ, फ़ोकस लगा सँवार
प्रेम तू अपनी ओर निहार।

श्रीपद्म-कोट,
१४-१२-१६१८

बड़ी तुम्हारी भूल

मित्र यह बड़ी तुम्हारी भूल
जो है सुख का मूल उसे तुम समझ रहे हौ शूल

२

कोमल कल्प-वृक्ष को मानौ कंटक-वृक्ष बबूल
प्रेम-फूल के रस-पराग को गिनौ द्वेष-विष-धूल
मित्र यह बड़ी तुम्हारी भूल

३

जो है अति प्रतिकूल उसी को जानौ हो अनुकूल
ज़रा कष्ट से दब जाते हौ, ज़रा हर्ष से फूल
मित्र यह बड़ी तुम्हारी भूल

श्रीपद्म-कोट,
१६-१२-१६१८

प्रेम-कोर

पैनी प्रेम की कर कोर

अन-लखा लख, अन-चखा चख, छू अछूता छोर

२

प्रेम-दृग दुरबीन ले और प्रेम-रेशम डोर

अन-नपा अपना अपनपा नाप अपनी ओर

पैनी प्रेम की कर कोर

श्रीपद्म-कोट,

११-१-१९१९

भू-स्वर्गहि एक करौ

हृदय हृदय के बीच दयानिधि सदय प्रेम भरिपूर भरौ

जड़ जंगम जग माहिं सबहि थल विमल प्रेममय रूप धरौ

सबहि निधिन कौं करौ प्रेम-निधि, सब विधि जग-संताप हरौ

सहज-प्रेम-संसर्ग-सेतु स्रजि, प्रभु भू-स्वर्गहि एक करौ

श्रीपद्म-कोट,

१४-११-१९१९

ऐसा अब न करूँगा

गुरुजी ऐसा अब न करूँगा

कुटिल कुनीति, कुमति के मग में पग मैं अब न धरूँगा।

२

सुमन-माल को व्याल जानकर मन में भय न भरूँगा।
अम्मृत जान गरल-रस पी-पी जीते अब न मरूँगा।
गुरुजी ऐसा अब न करूँगा

३

मायाविनि ममता का भंडा फोड़े बिन न रहूँगा
समता, सुमति, सुकृत-सेवा के सुख से विमुख न हूँगा।
गुरुजी ऐसा अब न करूँगा

श्रीपद्म-कोट,
४-११-१९२०

दीन-दया

दीन पर दया करौ भगवान
यह अनाथ एक दास तुम्हारा, देखौ दयानिधान
त्राहि-त्राहि कर तड़प-तड़प कर त्याग रहा है प्रान
दीन पर दया करौ भगवान

२

ज़रा झरोखे से झुक करके, रुक करके धर ध्यान

लंबे हाथ-पाँव टुक करके, नाथ उबारौ आन
दीन पर दया करौ भगवान
श्रीपद्म-कोट,
२८-१२-१९२०

दुख-अंत

सीधे पंथ को गहौ
गहौ जो सीधे पंथ को प्यारो तो सुखवंत रहौ

२

सीधे-सीधे , सीधे बात कहौ
सीधे बकौ, झकौ और झिड़कौ, सीधे झिड़कं सहौ
सीधे पंथ को गहौ

३

सीधे-सीधे कारज साधौ, सीधे भार बहौ
सीधे करौ संत-जन-संगत, जो दुख-अंत चहौ
सीधे पंथ को गहौ
श्रीपद्म-कोट,
२०-१०-१९२०

कान्हा

गोकुल में फिर से आकर बंसी बजा दे कान्हा
कुंजों में बाल-लीला फिर से मचा दे कान्हा
मधु-बन में जो सुना था तेरा मधुर तराना
जी में खटक रहा है फिर से सुना दे कान्हा
तेरे दरस को व्याकुल गायें बिलख रही हैं
सूरत सलौनी उनको फिर से दिखा दे कान्हा
तेरे चरन-परस को जमना उमड़ बही थी
पूरन वो प्रेम-धारा फिर से बहा दे कान्हा
तेरे शुभागमन पर गाया जो था जहाँ ने
घर-घर वही बधावा फिर से गवा दे कान्हा

श्रीपद्म-कोट,
जन्माष्टमी, १९७४

बिछुड़नेवाले

बिछुड़नेवाले यों बिछुड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

१

हमें है सारा क़िस्सा याद। पुराना सुना हुआ संवाद
भरे हैं उससे वेद पुरान। करैं हैं सभी गुनी जन गान
ध्यान दो करके कान खड़े

बिछड़नेवाले यों बिछड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

२

हमारा प्यारा हिंदुस्तान। पुराना है आर्यों का स्थान
कभी था जग में यही प्रधान। कहें हैं ऐसा सभी सुजान
जगत में थे वह आर्य बड़े
बिछड़नेवाले यों बिछड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

३

प्रेम का था यह आदि निवास। सभ्यता, विद्या का घर ख़ास
प्राप्त था सब सुख बिना प्रयास। व्याप्त था विक्रम विभव विकास
द्रोह के पथ में नहीं पड़े
बिछड़नेवाले यों बिछड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

४

सोम-रस का करते थे पान। साम-पद का करते थे गान
होम और यज्ञों की थी बान। सत्त्व और स्वत्वों का था मान
कृत्य पर बीसों बार लड़े
बिछड़नेवाले यों बिछड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

५

उन्होंने लेकिन यह क्या किया। किए पर एकदम चौका दिया
सोम-रस छोड़ द्रोह-मद पिया। प्रेम का गला घोंट बिस दिया
गिरे हो औंधे खोद गढ़े

बिछड़नेवाले यों बिछड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

६

शीघ्र ही बढ़ा देश का क्लेश। बदल गई सूरत बिगड़ा वेश
मेल का नाम हुआ निश्शेष। फूट का धाम हो चला देश
पुण्य के फिसल पाँव पिछड़े
बिछड़नेवाले यों बिछड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

७

मोद का मेला टूट गया। प्रीति का पैंदा फूट गया
एकदम विधना रूठ गया। क़ौम का पौधा ठूँठ भया
ज़ो मिलनेवाले थे बिछड़े। जो चलनेवाले थे पिछड़े
ज़ो उठनेवाले थे उखड़े। जो बननेवाले थे बिगड़े
बिछड़नेवाले यों बिछड़े। पिछड़नेवाले यों पिछड़े

श्रीपद्म-कोट,

७-१२-१९१८

मातृ-भूः

हिमनगभूषितभालां, सुरधुनिजलधौतजानपदजालाम्
प्रकृतिविभूतिविशालां वंदे त्वां त्रिदशकोटिजनपालाम्
नवजीवनपूर्णां परहिततूर्णां परार्थिपरिकीर्णाम्
साधितदीनोद्धरणां बाधितसर्वाधिसंघसंसरणाम्

दिशिदिशि वितीर्णधान्यां विनयवदान्यां मनस्विसम्मान्याम्
संवर्द्धितसौजन्यां ध्याये धन्यां नृधाममूर्धन्याम्
वर्णचतुष्कमजुष्टां शिष्टामगजगदनुक्रमज्येष्ठाम्
सदसद्ज्ञानगरिष्ठां सत्येष्टां स्वात्मशासनसचेष्टाम्
करुणावरुणायतनां प्रयतानंदप्रदानुभावयुताम्
सुधृतपयोनिधिरसनां कृषिवनवसनां श्रुतौ कृतव्यसनाम्
पूर्वतपःप्रतिबिंबां शुचिप्रभाभासुरां शुभारंभाम्
मज्जीवनावलंबां वंदे मज्जन्ममेदिनीमंबाम्
त्वं मे मा त्वममाया त्वं सेव्या मे त्वमेव हि सहाया
त्वं सत्या त्वनपाया स्तुत्या नित्या त्वमीश्वरीमाया
त्वं मे कुरु हृदि वासं स्वांतःसंतापसंततिनिरासम्
शतसौभाग्यविलासं सततं स्वातंत्र्यसंपदुल्लासम्

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
११-२-२२

पुण्य मातृ-धरे

जय जय पुण्य मातृ-धरे
मृण्मयी, महि-अंक-वासिनि, मृदु-मयंक-कला-विलासिनि
द्युमणि-दीप्ति-अलंकृतोज्ज्वल-अंग-चारु-तरे

२

स्वर्ण-सित-गिरि-शीश-सोहिनि, सुछवि-स्वर्ग-अधीश-मोहिनि

सदय-संयम-नियम-यम-मय-अभय-अस्त्र-धरे

जय जय पुण्य मातृ-धरे

३

सकल-सद्गुण-सहज-स्वामिनि, सतत-सुंदरि, सुकृत-कामिनि

अखिल-जग-सुगृहीत-नाम, सुपूजितांघ्रि-वरे,

जय जय पुण्य मातृ-धरे

४

अतुलबलवति,पुण्य-कायिनि, सरल-शुचि-मति,अतिअमायिनि

सतत प्रण-पालिनि, प्रणत-जन-परित्राण-परे,

जय जय पुण्य मातृ-धरे

५

विमल-प्रीति-सुपंथ-बोधिनि, कुटिल-नीति-प्रपंच-रोधिनि

सकल-जन-अनुकूल-मंगल-शासन-प्रसरे

जय जय पुण्य मातृ-धरे

६

उच्च-जीवन-उदय-रूपिणि, शुचि, सुधी-जन-हृदय-भूपिनि

यश-उदीरण-सुविवशीकृत-श्रीधर-भ्रमरे,

जय जय पुण्य मातृ-धरे

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,

२४-११-२२

पुण्य भारत-मही

जय जय पुण्य भारत-मही
सुकृतियों ने गाय जिसकी सुकृत-गाथा कही

२

सुकृत-धवलित सतत जिसकी सुयश-धारा बही
निरखि तप-द्युति द्युपति-उर में असह ईर्षा दही

३

प्रकृत-गौरव-सुकृत-सौरभ-पूरिता, सुखमयी
अतुल छवि अवलोकि मोही अखिल लोकत्रयी

४

प्रचुर जलथल, रुचिर नभ-तल, पवन परिमल-वही
अमित-भुजबल-भरित-सुत-दल-सेविता, लहलही

५

रहै जुग जुग जीविता, शुचि-श्री-युता, डहडही
गहै श्रीधर-हृदय, प्रति पल, सुदृढ़ आशा यही
जय जय पुण्य भारत-मही
श्रीप० को०, २०-२-१९२३

छिपे कहाँ हे लाल ?

फिरौ हौ छिपे कहाँ हे लाल
दरस दो क्यों न शीघ्र गोपाल ?
तरस रहीं गैयाँ गोपी ग्वाल
तड़प रही मैया है बेहाल
रम्य वह वृंदारण्य रसाल
बिगड़ गया, बीहड़ बना विशाल
फैल रहा दुख दरिद्र का जाल
रत्न-भू हुई रंक, कंगाल
समैया हैगा कठिन कराल
सहैया बनौ स्व-जन-प्रतिपाल !
नवल-घन-नीलोत्पल-दल-श्याम
गुण-त्रय-मय त्रिलोक-अभिराम
राधिका-रमण, गोपिका-प्राण
दस्युता-दमन, साधुता-त्राण
पहन लो पीतांबर वन-माल
सजालो बर्हि-पिच्छ शुचि भाल
कच्छ कटि कसकर स्वच्छ सँभाल
बना लो नटवर वेश, दयाल !

ग्रहण कर ललित त्रिभंगी चाल
मर्त्य भव में जीवन दो डाल

श्रीप०को०

श्रीकृष्णजन्माष्टमी

आप सहाई

हो अपने तुम आप सहाई
जो है काम आप करने का औरों से वह बनै न भाई

२

अपनी ओर निहार करौ कुछ अपने हित नित आप कमाई
जो हरि-कृपा-सहित चाहौ निज सुख संपति जग सुजस बड़ाई
हो अपने तुम आप सहाई

श्रीप० को० ३१-७-१९१९

परिवर्तन-तत्त्व

परिवर्तन-रत जयति सतत संसार सत्य-मय
सुंदर सरल सुढाल सुगम सुविधा-सुकृत्य-मय
परिवर्तन है प्राण प्रकृति के अविकल क्रम का
परिवर्तन-क्रम ज्ञान मर्म है निगमागम का

परिवर्तन है हीर सृष्टि के सौंदर्यों का
परिवर्तन है बीज विश्व के आश्चर्यों का
निभ सकता नहिं प्रकृत धर्म-क्रम परिवर्तन बिन
चल सकता नहिं प्रगति-कर्म-क्रम परिवर्तन बिन
परिवर्तन का अतः अरे मत कर अवहेलन
लख ले उसका सुघर स्व-सत्ता से शुचि मेलन
पाय तत्त्व का ज्ञान तथ्य को स्वीय बना ले
परिवर्तन-आदर्श आशुता से अपना ले

मलिंगार, मसूरी

७-५-२५

पुण्य-विभूति

भारत-धरणि पुण्य-विभूति,
पुण्य-धन-मयि, पुण्य-जन-मयि, पुण्य-पुंज-प्रसूति

२

पुण्य-मन-वच-कर्म-क्रम-मयि, पुण्य-जप-तप-जोग-श्रम-मयि,
पुण्य-जीवन-ज्योति-चिन्मयि, पुण्य-प्रेम-प्रभूति
भारत-धरणि पुण्य-विभूति

३

ब्रह्म-गर्भिणि, ब्रह्म-गात्री, ब्रह्म-धर्मिणि, ब्रह्म-धात्री,

ब्रह्म-हरि-हर-प्रेम-पात्री, ब्रह्म-विधि-करतूति,
भारत-धरणि पुण्य-विभूति

४

विश्व-वंदित-युगल-चरणी, विश्व-मंगल-उदय-करणी,
विश्व-संपति-सुकृत-सरणी, विश्व-शक्ति अछूति
भारत-धरणि पुण्य-विभूति

श्रीपद्म-कोट,
दिसंबर, १९२१

भारत-वसुंधरा

त्रैलोक्य-वंदनीया भारत-वसुंधरा है
हिम-पर्वतीय माला, शुचि भ्राजिता विशाला
उस पर शिवाद्रि-आभा सुविभूषितांबरा है

२

कश्मीर दार्जीलिंगा, "किन्चिन्" तुषार-शृंगा
स्वर्ग्या, सुचारु गंगा, सुषमा मनोहरा है

३

पुर, तीर्थ, ग्राम, शोभा, तप-आश्रमों की जो भा
लखकर द्यु-लोक लोभा, अपरा अनश्वरा है

४

सत्य-व्रता सु-वीरा, गरिमा-युता गभीरा
शुद्धा, स्व-धर्म-धीरा, स्वस्था, स्व-निर्भरा है
त्रैलोक्य वं०

श्रीपद्म-कोट,
३०-४-२३

हरि-नाम मधुर

जय जय हरि नाम मधुर। हरि जन गुण-ग्राम मधुर
सुषमा सुख-धाम मधुर। सुविहित शुभ काम मधुर
मुक्ता-मणि-दाम मधुर। ललना सु-ललाम मधुर
लिप्सा-उपराम मधुर। सेवा निष्काम मधुर
धन-जन-गृह-संपति-युत जीवन अभिराम मधुर
जय जय हरि०

२

उपवन वन ताल मधुर। सरवर-कृषि-जाल मधुर
मरु-थल सु-विशाल मधुर। पंकज सु-मृणाल मधुर
शंकित मृग-माल मधुर। अचपल गज-चाल मधुर
सरगम स्वर ताल मधुर। नव युव नव बाल मधुर
।सत-गिरि-तति-भूषित-भुवि-भारत-भ्रू-भाल राधुर
जय जय हरि०

३

निज गृह निज देश मधुर। निज जन निज वेश मधुर
हित-कर संदेश मधुर। बुध-वर-उपदेश मधुर
शशधर-परिवेश मधुर। प्रियवर-विनिवेश मधुर
लघिमा सविशेष मधुर। महिमा-लव-लेश मधुर
विद्या अनवद्या शुचि-श्रद्धा-आवेश मधुर
जय जय हरि०

४

वीणा-निक्वणन मधुर। नूपुर-रव-रणन मधुर
कानन भुवि भ्रमण मधुर। सम-वय-प्रिय-रमण मधुर
खल-दल-बल-दमन-मधुर। सुविनत-जन-नमन मधुर
ऊषा-उद्गमन मधुर। पूषा-संक्रमन मधुर
शीतल शुचि सुरभित मृदु मलयज-रज-पवन मधुर
जय जय हरि०

५

सज्जन-सत्संग मधुर। सुरसिक रस रंग मधुर
कोविद कवि-ढंग मधुर। युव-वय युव-अंग मधुर
प्रिय-वर-आलिंग मधुर। गुंजित-रव-भृंग मधुर
शिक्षा-प्रद व्यंग मधुर। मिथ्या-भ्रम-भंग मधुर
अभयामृत-दातर प्रिय मातर-उत्संग मधुर

जयति मद मोह, जय काम, जय क्रोध,
जय विनय नय बोध, प्रण-प्रणय-सानी

५

काम-क्रोधादि-क्रम-तत्त्व-अवबोध बिन,
सत्त्व या स्वत्व क्या समझ आवै
भाव-प्रतियोग-अवसान हो जाय तो,
भोग, उपभोग किस भाँति भावै ?

६

भोग, उपभोग बिन सत्त्व का मान क्या,
सत्य का स्थान क्या, सोच प्यारे
असत, आश्चर्य, अनुबंध, छल, छंद बिन,
ज्ञान-विज्ञान-आनंद क्या रे ?

७

सत्त्व सब, तत्त्व सब, मूल हैं स्वत्व के,
सकल सुमहत्त्व के, भूल मत रे
सृष्टि-क्रम सकल अनुकूल है सत्य के,
डाल इस तथ्य पर धूल मत रे

८

अतः जय जयति प्रतियोग-क्रम-कुटिल-गति,
जटिल अति, अटल, जग-अखिल-व्यापी

जयति जय विजय, जय अभय भय-भावना-

भाव भ्रम विकृत-विधि प्रकृति-थापी

६

अतः मति मूढ़, प्रतियोग-गति ढूँढ़, अति

प्रौढ़ हो परख प्रति रूढ़ वाणी

सत्य का पंथ गह, तत्त्व का अंत लह,

सतत अभ्रांत सदसत् प्रमाणी—

श्रीपद्म-कोट,

२६-१२-१६२३

भ्रमर-गीत

[१]

ग्रहण कर मधुकर नीति नई

मधुर गुंज-मद से पल-भर को भर दे भुवन-त्रयी

२

पल ही में तब पलट पड़ेगी पूरन प्रेम-मयी

जग के बीच बजेगा तू तब त्रिभुवन का विजयी

ग्रहण कर मधुकर नीति नई

---

[२]

हठीले भौंरा, इतनौ हठ दै छोड़

इतनौ मति इतराय, करै मति ऐंठीलेन की होड़

२

जो तोसौं बतियाउ करै नहिं, पै राखै मौंह मोड़ि

तू तासौं बतियाउ करै मति, पै नातौ दै तोड़ि

हठीले भौंरा, इतनौ हठ दै छोड़

---

[३]

रसीले भौंरा, कलियन कौं मति छेड़ि

दै भजाइ छेड़नहारेन कौं बन सौं बरुक खदेड़ि

२

अपुढारी खिलि उभरि जान दै टिकिजा औसरु हेरि
अबहिं भरनि, उभरनि, उठानि में द्वै दिन की है देर
रसीले भौंरा, कलियन कौं मति छेड़ि

---

[४]

भ्रमर तुम बन बन भ्रमण करौ
सकल सुरम्य सुख-स्थलियों में रुचियुत रमण करौ

२

विटप विटप पर प्रचुर प्रेम का परिचय दे बिचरौ
पुष्कल पुष्ट पुष्प मधु पी पी पथ-श्रम-खेद हरौ
भ्रमर तुम बन बन भ्रमण करौ

३

कुंज कुंज में जाय प्रेम की मंजुल गुंज भरौ
प्रेम-पुंज-संजनित मंजु-श्री तरु तरु प्रति बितरौ
भ्रमर तुम बन बन भ्रमण करौ

४

मृदु मंजरियों के अंचल पर चंचल पग न धरौ
मृत पंखड़ियों के पंजर प्रति प्रणमन मत बिसरौ
भ्रमर तुम बन बन भ्रमण करौ

५

अ-नत, अ-तंत्र, लता-गुल्मों में उन्नत हो न अड़ौ
सु-नत, सु-तंत्र, सुमन-ततियों की रति में अति न पड़ौ
भ्रमर तुम बन बन भ्रमण करौ

६

बिहरौ—निज-परता-विवाद की विपदा से न डरौ
गुंज गुंज में मसृण मंजु रव "नारायण" उचरौ
भ्रमर तुम बन बन भ्रमण करौ

---

[५]

भ्रमर वर, गुंज मधुर हरि नाम
शांति-पुंज, भव-भ्रांति-भंज-कर, मोहन, मंजु, सुदाम

२

सुभग, सुबोल, सुगेय, सुगोचर, अमल, अमोल, ललाम
सुपद, सुबोध, सुबुद्धि-प्रमोदित, ऋद्धि-सिद्धि-ध्रुव-धाम
भ्रमर वर०

३

सजग-प्रेम-मय, त्रिजग-छेम-मय, अननुमेय-गुण-ग्राम
दुरित-दोष-दुर्वृत्त-दुराग्रह-द्विविधा-द्वंद्व-विराम
भ्रमर वर, गुंज मधुर हरि नाम

---

[६]

मधुकर, प्रेम-गुंज सुनाउ

प्रेम-मद-मकरंद मधु छकि, प्रेम-दुंद मचाउ

२

प्रेम-रँग रँगि, प्रेम-मग गहि, प्रेम-पगहि बढ़ाउ

जाउ सजग स्वतंत्र, जग में प्रेम-मंत्र जगाउ

मधुकर, प्रेम-गुंज सुनाउ

---

[७]

कहाँ कहाँ भ्रमि आयौ रे, भ्रमर वर

सुमन द्रुमन रस-भवन रमन हित कौन कौन दिसि धायौ रे
भ्रमर वर

२

कौन कौन से सुमन द्रुमन में, कौन कौन रस भायौरे. भ्रमर वर

कौन कौन रस त्यागन कीनौ, कौन कौन अपनायौ रे, भ्रमर वर

कहाँ कहाँ भ्रमि०

३

कौन कौन कौ कौन कौन प्रति कौन कौन गुन गायौ रे, भ्र०

मौन कौ मारग गह्यौ कौन प्रति, कौन सों अति बतरायौ रे, भ्र०

कहाँ कहाँ भ्रमि०

४

मंजु गुंज सों किन सुमनन कों प्रेम-पुंज-रस प्यायौ रे, भ्र०

धाय धाय किन किन कलियन ढिंग, नित नित नेह बढ़ायौ रे, भ्र०
कहाँ कहाँ भ्रमि०

५

छकि मकरंद भ्रमर-भ्रमरिन संग, कहाँ कहाँ दुंद मचायौ रे, भ्र०
कहाँ कहाँ भटकि भटकि भ्रम में परि, गांठि कौ ज्ञान गमायौ रे, भ्र०
कहाँ कहाँ भ्रमि०

६

कहाँ कहाँ प्रीति की रीति निबाही, कहाँ छल-छंद चलायौ रे, भ्र०
कौन कौन सों रीस करी तैंने, कौन कों सीस झुकायौ रे, भ्र०
कहाँ कहाँ भ्रमि०

७

भ्रमत भ्रमत नित रस लैबे हित, जीवन इतिक बितायौ रे, भ्र०
कहाँ कितिक की आस करी तैंने, कहाँ कितिक रस पायौ रे, भ्र०
कहाँ कहाँ भ्रमि०

मलिंगार,

मसूरी, २-८-२४

---

[८]

हरि-पद-कंज-रस लहि भ्रमर

मंजु-हरि-पद-कंज-रस लहि, भंज भ्रमर-भय-निकर

२

शोक-दुख-भव दोख-दव तजि, भोग भव-सुख अमर
प्रेम-धन भरि धन्य मन करि, अन्य धन पर न मर
हरि-पद-कंज-रस लहि भ्रमर

मलिंगार,
मसूरी, १५-७-२४

---

[९]

भव-भय भंज रे, मन भ्रमर
भंज भव-भय, मोह-मद-मय, सेव हरि-पद-कंज रे, मन भ्रमर

२

पूरि पुनि पुनि मंजु-गुन-धुनि, भूरि हरि-जस गुंज रे, मन भ्रमर
बासना कौ नास करि और लालसा करि लुंज रे, मन भ्र०
भव-भय भंज०

३

ज्ञान घन आनंद पुनि पुनि पान कर रस-पुंज रे, मन भ्र०
ध्यान धरि उर साजि सुंदर प्रेम-कानन-कुंज रे, मन भ्र०
भव-भय भंज०

मलिंगार,
मसूरी, २४

---

[१०]

(कजली)

महलन फूलि रही फुल-बगियाँ, भौंरा रस लैबे किन जाय

२

फूली जुही, चटकि रहे चंपा, कमल रहे कलियाय
विटपनु लिपटि चमेली खिलि रही अलबेली छबि छाय
महलन०

३

बेला कुंद कदंब केवड़ा मस्त रहे महकाय
बाढ़ी बालि केतकी फूली नैनन रही लुभाय
महलन०

४

प्रफुलित सुजन-संत-मन, हुलसित जीव जंतु सुख पाय
श्रीधर रोम-रोम भए पुलकित हरख न हृदय समाय
महलन०

मर्लिगार,

मसूरी, २१-७-२४

---

[११]

(कजली)

गजरा गूँथि रही मालिनिया, बंगला रह्यौ कलिन सों छाय

थरवा भरे महकि रहे हरवा, भँवर रहे मँडराय
गजरा गूँथि०

२

कारी घटा सघन सावन की घिरि रही दिनहि दुराय
दामिनि दौरि दौरि द्रुत दमकत गरजन-लरज दिखाय
गजरा गूँथि०

३

पवन झकोर ढीठ भौंरन की भीरहि रही हटाय
मच्यौ घोर घमसान गगन गहि घन घुमड़त घहराय
गजरा गूँथि०

४

ताही समय मत्त भौंरा एक बिड़रि चल्यौ बौराय
झुकि झुकि गिरत सुघर मालिनि के मुख-मंडल पै धाय
गजरा गूँथि०

मलिगार,
मसूरी, ७-६-२४

---

[१२]

गजरा गुहै सुघर मालिनिया, भौंरा बहकि गयौ तहँा जाय

२

चारु चमेलिन की कलियन कौ परसन ताहि सुहाय

बेला जुही हार चंपा के दरसन सों अनखाय
गजरा गुहै०

३

सजि रहे थार भरे फूलन के तिनहूँ कों न पत्याय
मौरत नवल मलिनिया ही के मुख-मंडल ढिंग धाय
गजरा गुहै०

मलिंगार,

मसूरी, ६-७-२५

---

[१३]

अहे रसिकवर भ्रमर वहाँ जिन जाव रे
जहाँ भ्रमर नहिं जायँ भ्रमन-हित रावरे

२

जहाँ न कानन-केलि-कुंज रस-पुंज रे
नहिं मकरंद-पराग, मंजु अलि-गुंज रे

३

जहाँ न सीतल मंद सुगंध समीर रे
सरवर सरित सहंस सकंज सुनीर रे

४

मौरत भरित-अनंद भौंर-वर-भीर रे
सुंदर सरल सुरीति सुछंद सुधीर रे

५

सजे मनोहर साज, सहज छवि सुघर रे
लाखन भ्रमत लखात लखन जिहि भ्रमर रे

मलिंगार,
मसूरी, २०-६-२४

---

[१४]

पुनि पुनि भ्रमर चुंबन करत
केतकी के अंक आय निसंकता मन धरत

२

कबहुँ अँचरत कबहुँ कचरत, कबहुँ मचरत, अरत
निरत-रत अति, सुरति बिसरत, कबहुँ रति आचरत
पुनि पुनि भ्रमर०

३

कबहुँ परि परकीयता-रस, स्वीयता संचरत
कपट-प्रीति दिखाय कुनृप कुनीति जिमि अनुसरत
पुनि पुनि भ्रमर०

देहरा-इलाहाबाद मेल,
३१-१०-२४

---

[१५]

(कजली)

बन में फूलि रहे गुड़हरवा, भौंरा धाय धाय फिरि जाय

बरसत अति सुकुमार सरस अति, परसत मन न पत्याय

२

फिरि-फिरि फिरत, निरत हित थिरकत, निरखत हित चित लाय
चुंबन करत मधुर मधु मिलत न मुरकत तब खिसियाय
बन में०

मलिंगार,

मसूरी, २५-७-२६

---

[१६]

उन कुंजों मत जाइयो, रे भौंरा, जहाँ न अपना मेल
जहाँ पै तेरे मन-चले, भौंरा, चल न सकें अठखेल
रे भौंरा चल न सकें अठखेल—

२

हेल-मेल रँग-रेल की, रे भौंरा, जहाँ न उलहै बेल
वहाँ पै तेरे ढोंग प्रेम के, होंगे फिर फिर फेल
रे भौंरा, होंगे फिर फिर फेल—
रे भौंरा, जहाँ न अपना० मेल—

मलिंगार,

मसूरी,

७-५-२५

---

[१७]

कहूँ प्यारौ भौंरा भटकि रह्यौ रे

इन क्यारिन नहिं आयौ आज, कहूँ भौंरा भटकि रह्यौ रे

२

काहू गह्वर की कुंज-गलिन में

काहू सरवर की कंज-कलिन में

कै भौंरिन-सँग रंग-रलिन में

बौरा अटकि रह्यौ रे

कहूँ प्यारौ भौंरा भटकि रह्यौ रे

---

[१८]

मधुकर, हाव-भाव बनाउ

हाव-भाव बनाव बिन मधु मिलन कौ न उपाउ

२

लहन मधु, मन चहन पुजवन, नाहिंन जहँ कहँ जाउ

जाउ जहँ तहँ गहउ तब बिनु रहन सहन सुभाउ

मधुकर, हाव-भाव बनाउ

३

फिरहु बन बन, करहु सब सन, नबनि-युत बरताउ

सुमन सुमन समान सुंदर बंधु सम भरि भाउ

मधुकर, हाव-भाव बनाउ

४

मिलउ सब सौं भेटि भुज, साजि बेस सुभ, ताजि ताउ'
कुंज कुंजनु जाउ, या बिधि, मंजु गुंज सुनाउ
मधुकर, हाव भाव बनाउ

श्रीपद्मकोट,
१५-१२-२७

चर-गीत

[१]

हम सेवा कर सब भाँति जगत को सुख पहुँचावेंगे

१

हम सबके सेवक चर हैं । हम सब जग के किंकर हैं
हम सेवा-सुमन-भ्रमर हैं । सेवा-सुर-तरु सुंदर हैं
जग-सेवा का जग को सुरभित उद्यान बनावेंगे
हम सेवा कर सब भाँति जगत को सुख पहुँचावेंगे

२

हम दीनों की सुध लेवें । बल-हीनों को बल देवें
दुखियों की नैया खेवें । सेवा-रहितों को सेवें
झट संकट जग के मेट शांति से भेट करावेंगे
हम सेवा कर सब भाँति जगत को सुख पहुँचावेंगे

३

प्रिय भारत देश हमारा । है हमें स्वर्ग से प्यारा
त्यों ही ब्रटेन भी सारा । है प्यारा मित्र हमारा
हम दोनों के सेवक हैं, सेवा-धर्म निभावेंगे
हम सेवा कर सब भाँति जगत को सुख पहुँचावेंगे

४

सेवा की चाह जहाँ हो । दुखिया की आह जहाँ हो

जग बेपरवाह जहाँ हो। नहिं प्रेम-प्रवाह जहाँ हो
है वहाँ हमारा काम, वहाँ हम नाम कमावेंगे
हम सेवा कर सब भाँति जगत को सुख पहुँचावेंगे

---

[२]

जग-सेवक, चर हैं, हम हम हम
सब सेवक-वर हैं, हम हम हम

१

सेवक चर हैं, सेवक वर हैं। शुचिता, शील, दया के घर हैं
सेवा में रहते तत्पर हैं। करते हरदम श्रम श्रम श्रम
जग-सेवक, चर हैं, हम हम हम

२

सेवा के हित फिरें विचरते। विपदा के मग में पग धरते
कठिनाई से कभी न डरते। कहीं न रुकते थम थम थम
जग-सेवक, चर हैं, हम हम हम

३

कष्ट कहीं पर जो सुन पावें। सुनते ही एकदम वहाँ धावें
जो कुछ सकें मदद पहुँचावें। मुस्तैदी से जम जम जम
जग-सेवक, चर हैं, हम हम हम

४

चाहे पड़ रही धूप कड़ी हो। बरसा की लग रही झड़ी हो
कड़कके बिजली तड़प रही हो। चमक रही हो चम चम चम

काम पै तब भी जाय डटें हम। विघ्न से डरकर नहीं हटें हम
बिपत के सिर पर जाय जुटें हम। पहुँचके धड़ से धम धम धम
जग-सेवक, चर हैं हम हम हम
सब सेवक-वर हैं, हम हम हम

---

[३]

प्यारा हिंदुस्तान हमारा

१

प्यारा बयाबान और जंगल
झील, पहाड़, झाड़ और दलदल
बीहड़, बाग़, फूल, मेवा, फल
प्यारा है हर एक नज़ारा
प्यारा हिंदुस्तान हमारा

२

प्यारी गंगा, प्यारी जमना,
गोदावरी, नर्वदा, कृष्णा
हिमालया, हिंदू-कुश, विंध्या,
प्यारी ज़मीन आस्माँ प्यारा
प्यारा हिंदुस्तान हमारा

३

हिंदू, मुसलमान, ईसाई

बौद्ध, पारसी, जैनी भाई
मंदिर, मूरत, तीरथ, मसजिद,
मक्का, प्राग, हज्ज, हरद्वारा
प्यारा हिंदुस्तान हमारा

४

तुझको दिल से प्यार करें हम
तुझ पर जान निसार करें हम
तेरा दम हर बार भरें हम
तू दिलवर, तू यार हमारा
प्यारा हिंदुस्तान हमारा

---

[४]

देश की सेवा कर बंदे
जो तुझसे सेवा बन आवै
जग से दुख-देवा मिट जावै
सुख से सब प्रृथिवी पट जावै
कट जावैं फंदे
क्लेश के कट जावैं फंदे
देश की०

२

मन में अटल देश-व्रत धर ले

तन में अतुल तेज-बल भर ले
शुभ संकल्प प्रेम-प्रण कर ले
तज दे छल छंदे
द्वेष के तज दे छल छंदे
देश की से०

३

होवै सुफल तेरी शुभ सेवा
देवैं योग स्वर्ग के देवा
सब जग चखै सुकृत की मेवा
भोगै आनंदे
सकल जग भोगै आनंदे
देश की से०

श्री पद्मकोट
२६-११-२०

---

[५]

यही दो वरदा मा वरदान ; करें हम भारत का उत्थान
बनें सच्चे नागरिक सुजान ; सुमति विद्या-गुण-शील-निधान
देश की सेवा कर स-विशेष ; क्लेश का लेश न रक्खें शेष
बनें शुभ राज्य-भक्ति की खान ; प्रेम की पावें शक्ति महान
वचन के पालन में दृढ़ होय ; कपट के कल्मष को दें धोय

हृदय में श्रद्धा का हो बास ; हमारा करें सभी विश्वास
स्वार्थ और लालच को दें त्याग ; हृदय में भरें भ्रातृ-अनुराग
बड़ों की सेवा पर दें ध्यान ; रखें गुरु-मात-पिता का मान
स्नेह के मद में होकर चूर ; द्वेष का भाव भगावें दूर
सत्य-प्रियता का कर संचार ; मधुर भाषण का करें प्रचार
सभी जीवों के होंय सहाय ; सोचकर सुख के सुगम उपाय
बड़ों की आज्ञा को सिर धार ; चलें भरसक उसके अनुसार
सभी को अपने जैसा जान ; दया हम सब पर करें ग़मान
हरें नहिं किसी जीव के प्रान ; रखें आत्मा अपनी बलवान
रखें निज मन-बच-कर्म पवित्र ; धर्म में रहें सदा सुचरित्र
प्रेम-मयि, हे करुणा-आगार ; विश्व में भर दो प्रेम अपार

श्री पद्मकोट
३०-१-२१

---

[६]

देश की सेवा कर बंदे ; छोड़कर सारे छल छंदे
कटें जिससे दुख के फंदे ; चलें दुनिया के शुभ धंदे
द्रोह के मिटें भाव गंदे ; प्रेम के हों सब पाबंदे
सुखी हों सोवें निरद्वंदे ; सत्य को सेवें स्वच्छंदे

जचें नहिं कोई मन मंदे ; मचें घर-घर में आनंदे
श्री पद्मकोट
४-११-२०

---

[७]

बालचर, भज भारत देशम्
भारत देशं, भज सविशेषं, त्यज रागद्वेषम्

२

सहज ललामं, शोभा-धामं, महि-मंडल-भूषम्
बुधवर-वृंदैः सुरनर-वंद्यैः सुविहित-शुश्रूषम्

बालचर०

३

तप द्युति सोहै, त्रिभुवन मोहै, स्तवन करें देवा
पुलकि सराहें, पुनि पुनि चाहें चरन-सुभग-सेवा

बालचर०

४

सुखद-समीरे, सुर-सरित्-तीरे, कानन-घन-कुंजे
दिशि-दिशि-प्रांते, रम्य प्रशांते, पावनता-पुंजे

बालचर०

५

शुचि हिम-निलये, सुरभित मलये, सुहरित गिरि-विंध्ये

सुकृत-प्रभूते, प्रकृति-प्रसूते, अविकृत, अविनिंद्य
बालचर०

६

उदधि अधीरे, उद्धत-नीरे, उग्र-अनल-कोपे
रवि उद्दंडे, प्रवन प्रचंडे, प्रिय-संज्ञा-लोपे
बालचर०

७

ऋषि-वन-गेहे, कृश-जन-देहे, कृषि-धन-जन-संघे
क्लिष्टे, क्रूरे, दुर्गति-पूरे, दूरे, दुर्लंघ्ये
बालचर०

८

कण-दुर्भिक्षे, रण-दुर्लक्ष्ये, क्षितिपे अविनीते
उत्थित-कष्टे, उदित अनिष्टे, दैवे-विपरीते
बालचर०

९

भज स्वावश्यं, त्यज आलस्यं, व्रज शुभ-पंथानम्
त्यज अभिमानं, व्रज म्रियमाणं, भज सेवा-स्थानम्
बालचर०

१०

भारत-भाग्यं, गत-वैराग्यं, कुरु स्ववशीभूतम्

भू-साम्राज्यं, कुरु अविभाज्यं, शुचि सेवा-पूतम्

बालचर०

श्री प० को०

२०-११-२१

---

[८]

(शांति मार्च)

शांतिः शांतिः शांतिः दिशि दिशि

शांतिः शांतिः शांतिः हृदि हृदि

शांतिः शांतिः भवतु सदा

भवतु हि भव-हित-रूपा, या

शांतिः भव-हित, शांतिः स्वभिमत, शांतिः सुविहित, सूपाया

शांतिः सुविहित सूपाया

शांतिः भव-हित-रूपा, या

शांतिः अविकल, शांतिः अविचल, शांतिः तप-फल-भूता, या

तप-फल, अविचल, अविकल, अविरल, अविरत-हरि-रति-पूता, या

या उर-धार्या, आर्या या गुरु, या शुभ-कार्या, सकल-प्रिया

या हरि-ध्येया, या ज्ञेया, ' गुणि-गण-गदिता, या गेया

शांतिः शांतिः शांतिः०

श्री प० को०

मई, १६२१

---

[९]

(नारायण मार्च)

नारायण नारायण नारायण नारायण,

नारायण नारायण, हर हर हर

हर हर शिव शिव, शिव शिव हर हर

हर शिव शिव हर, विश्वंभर

२

गंगा, यमुना, रेवा, कृष्णा, विष्णो, विष्णो, विधि, हरि, हर

लक्ष्मी कमला, वाणी विमला, दुर्गा, दुर्गा, दुर्गति-हर

जय गायत्री, जय जय गीता। जय सावित्री, जय जय सीता

धर्म सनातन पर्म पुनीता। मधुर, मनोहर, अनघ, अमर

हर हर शिव शिव, शिव शिव हर हर

हर शिव हर शिव, शिव शिव हर

नारायण नारायण०

३

श्री गोविंदे, परमानंदे, करुणाकंदे, दुःखनिकंदे

श्रीप्रद, श्रीपद, श्रीधरणीधर, श्रीधर, श्रीनिधि, श्रीपति वंदे

श्रीपति वंदे वंदे संता। वंदे भव-पारग भगवंता

वेद पुराण शास्त्र सद ग्रंथा। शुभ मति गति, सत संग सुघर

नारायण नारायण नारायण नारायण
श्री श्री हर हरि, श्री हरि हर
नारायण नारायण०

४

"इह संसारे, बहु-विस्तारे, कृपयाऽपारे पाहि मुरारे"
जय कंसारे, दशकंधारे, अघ-संघारे, अग-जग-प्यारे
लोक-त्रय-पति, त्रिगुणातीता। पुण्य-श्लोक, अशोक, अभीता
ताप-त्रयहर नाम-गृहीता। अव अवनीश्वर, अविनश्वर
नारायण हरि हरि, नारायण शिव शिव
शिव शिव नारायण, शिव हर हर
हर शिव शिव हर, शिव हर, हर शिव
शिव, शिव हरि हरि, हरि शिव हर
नारायण नारायण०

५

"मा कुरु धनजनगौरवगर्वम् , हरति निमेषात्कालः सर्वम्"
भज रामम् , जन-कामम् । अभिरामम्, सुख-धामम्
जग-वंद्यम्, अभिनंद्यम् । भव-बंधुम्, छवि-सिंधुम्
नं नं नर-हरि, रं रं रुज-अरि, यं यं यम-भय-भंजन-कर
शं शं श्रम-हर, वं वं विभु-वर, हं हं हल-धर, अं अघ-हर
नं नं रं रं यं यं णं णं शं शं वं वं हं हं हर

नारायण घट घट, नारायण पट पट, नारायण रट रट रे श्रीधर

नारायण नारायण०

श्री पद्मकोट

२१-१-२१

---

[१०]

(शिशु मार्च)

अ.आ.इ.ई.उ.ऊ.ऋ.ॠ. । ऌ.ॡ.ए.ऐ.ओ.औ.अं.अः

क.ख.ग.घ । च.छ.ज.झ

ट.ठ.ड.ढ । त.थ.द.ध

प.फ.ब.भ

ङ य ण न म

य र ल व ष श स ह क्ष-त्र-ज्ञ

य—र—ल—व—ष—श—स—ह

य र ल व ष श स ह क्ष-त्र-ज्ञ

सू०—इस मार्च के विषय में विशेष परिज्ञान के लिये इस पुस्तक की भूमिका देखो।

परिशिष्ट

विज्ञान-मंगल

१

सूर्य, अग्नि, जल, वायु, व्योम में जिसका बल है
जो सर्वत्र सुविज्ञों का जिज्ञासा-स्थल है
संचालक सबका, परंतु जो स्वंय अचल है
जगत-दृश्य जिसकी केवल माया का छल है
उस अटल तत्त्व के ज्ञान से माया-पटल विनाश हो
उस ब्रह्म-बीज विज्ञान का सब थल सुखद प्रकाश हो

श्रीप्रयाग,
अप्रेल, १६१५

२

जिसने सागर की तरंग पर रंग जमाया
आँधी, पानी, अँधियारी पर तंग चढ़ाया
बिजली पर त्यों विकट मोहनी मंत्र चलाया
किया निपट पर-तंत्र, स्वर्ग-संसर्ग छुड़ाया
उस विद्या-बुद्धि-विलास का जुग में जय जय कार हो
उस वर विज्ञान-विकास का घर घर में संचार हो

श्रीप्रयाग
१७-४-१५

३

जल-थल-नभ-मय विदित विश्व की सत्ता क्या है
शब्द-रूप-रस-गंध-आदि-गुणवत्ता क्या है
गुरुता, लघुता, बल, परिमाण, कियत्ता क्या है
अल्प, अधिक, और अणु, परमाणु इयत्ता क्या है
इन जिज्ञासाओं का प्रबल प्रति उर में उत्थान हो
प्रति ज्ञेय विषय के तत्त्व का विज्ञापक विज्ञान हो

श्रीप्रयाग,
मई, १९१५

४

रेल, तार, बेतार, एक्स-रे-रश्मि, रेडियम
फ़ोटो, फ़ोनो, अणुवीक्षण, द्रुत-अनु-लेखन क्रम
जल-थल-नभ-पथ-सुलभ-सरल-सर्वत्र समागम
मोटर, बायस्कोप, यंत्र-समुदाय अनूपम
यह जिसका अनुसंधान-फल अथवा आविष्कार है
उस पश्चिमीय विज्ञान का स्वागत सौ सौ बार है

भीमताल,
८-६-१५

५

जग का जिसने घटाटोप-तम प्रथम हटाया

मानव-कुल-अभिलषित, सुलभ, सुख-पथ प्रगटाया
रज से कंचन-रजत-रत्न-परिवर्त दिखाया
विद्या-बल-आनंद-अमृत-फल-स्वादु चखाया
रस, राग, रंग, रुचि, आदि का जो आदिम आधार है
उस भारतीय विज्ञान का जग भर पर ऋण-भार है
श्रीप्रयाग,

३-८-१५

६

जिसने सब से प्रथम सृष्टि के क्रम को जाँचा
जाँच-जंत्र का रचा प्रथम ही अद्भुत ढाँचा
जिसके सम्मुख साँच लाज तज निर्भय नाँचा
ऊँचे स्वर सद्ग्रंथ गूढ़ गाथा का बाँचा
जिसने स्व-साँच की आँच से जगती-तल दीपित किया
उस भारतीय विज्ञान का ध्यान करै हर्षित हिया
श्रीप्रयाग,

जन्माष्टमी, १९७२

७

उठता है एक प्रश्न जगत से पहले क्या था
जबतक दृश्य-प्रपंच कहीं कुछ नहीं बना था
यह सुदृश्य, आकाश-भूमि-मय, था कि नहीं था
चारु चराचर सृष्टि-समुच्चय था कि नहीं था

विज्ञान-बोध-विस्तृत-विहित, विविध अबोध-निवृत्ति जय

श्रीपद्म-कोट,

१६-४-१६१८

१०

अहो विज्ञ ! विज्ञान-बेलि अज्ञन उर बोवहु

अहो अज्ञ ! अज्ञान-मैल अंतर मलि धोवहु

सुमति-सिंधु-जल मध्य, कुमति-छल-छंद डुबोवहु

शुचि सुबोध सत संग सुरुचि रस रंग समोवहु

तौ होवहु सब सबकों सुखद, सोवहु सुखित सुछंद-तर

मंदार-ओक दिवि-लोक महँ ज्यों वृंदारक-वृंद वर

श्रीपद्म-कोट,

२८-४-१६१८

११

निज स्वदेश ही एक सर्व-पर ब्रह्म-लोक है

निज स्वदेश ही एक सर्व-वर अमर-ओक है

निज स्वदेश विज्ञान-ज्ञान-आनंद-धाम है

निज स्वदेश ही भुवि त्रिलोक-शोभाभिराम है

सो निज स्वदेश का, सर्व विधि, प्रियवर, आराधन करो

अविरत-सेवा-सन्नद्ध हो सब विधि सुख-साधन करो

रोग-शय्या, कालिवन-अस्पताल,

प्रयाग, ४-१-१६१७

१२

जय जय वैज्ञानिक भविष्य-भूषित भुवि भारत
सब विधि सुविधा-भरित, विविध विधि भुवि-सेवा-रत
त्यों जग के सब सुजन, सुखद जीवन-पथ-नेता
वैज्ञानिक साधन-सुयोग-प्रद, उन्नत-चेता
त्यों अन्य अन्य भू मात के धीर वीर गंभीर सुत
सब जीओ जयी जुगान जुग, जगत-अंत लों, जगत-नुत
श्रीपद्म-कोट,
२३-१-१६१८

१३

जगहु सकल-सुभ-स्रोत, विमल विज्ञान-ज्योति जग
रँगहु बहोरि बहोरि, त्रि-जग सर बोरि, प्रेम-रँग
खुलहु सुलभ सुख-ओक, विसद बिन रोक, प्रेम-मग
परहु सतत सब ओर, प्रेम-दृग-कोर, प्रेम-पग
अहो, चलहु फिरहु बैठहु उठहु सोवहु जागहु चर-अचर
है अमर, प्रेम, नर-देह-धर, मूर्तिमान विज्ञान-वर
श्रीपद्म-कोट,
१६-२-१६१८

१४

जय सत चित आनंद सघन विज्ञान-ज्ञान-मय
जय प्रतिछन प्रत्यच्छ प्रभृति लच्छन प्रमान-मय

जयति सजग साकार नित्य नव, निराकार जय
जय शोभा-आगार सुघर संसार-सार जय
त्यों सबलन बीच बलिष्ठ जो, जो घनिष्ठ सघनन विषै
जो व्यष्टि-समष्टि-वरिष्ठ विभु, गुन गरिष्ठ, जय जयति जै

श्रीपद्म-कोट,
२६-३-१६१८

१५

जग में होता नित्य अवैधिक व्यत्यय दीखै
प्राय: दैविक कृत्य अनित्य अनिश्चय दीखै
परिवर्तन-रथ-चक्र, वक्र-पथ, उद्धत दीखै
आवर्तन-क्रम, क्रम-विहीन, भ्रम-आवृत दीखै
पर जो सुविज्ञ विज्ञान-बल-अनुशीलन में लग्न हैं
उनको सारे विधि-कृत्य-क्रम, सूझैं सरल अभग्न हैं

श्रीपद्म-कोट,
६-८-१६१८

१६

जयति सुमति-संपन्न सुजन, जग-धन्य-जन्म-धर
शुचि-सनेह, गुन-गेह, ध्येय-ध्रुव, धीर-वीर-वर
त्यों नित दया-द्रवंत संत द्रुत-दुरित-अंत-कर

जग-जीवन, जग-बंधु, जटिल-छल-छंद-द्वंद-हर
त्यों ललित कलित कौशल कलादिक दिगंत दीपित-करन
विज्ञान वीर विजयंति जग, विविध विघ्न-बाधा-हरन
श्रीपद्म-कोट,
११-६-१९१८

१७

करौ नित्य सत ज्ञान-अमृत-कन पान प्रेम-मय
धरौ नित्य भगवान-भक्ति मन आन प्रेम-मय
दो सबको सम मान, स्वजन-सम्मान प्रेम-मय
लो स्वदेश को जान स्वजीवन-प्रान प्रेम-मय
बस यही विशद विज्ञान का लक्ष्य परम रमणीय है
जो मति इसके प्रतिकूल हो अतिव तिरस्करणीय है
श्रीपद्म-कोट,
१६-१०-१९१८

१८

जय कर्मन्य किसान, सर्व जग-धन्य मान्य-वर
जयति सर्व-सामान्य-प्रवर, पुं-वर, वदान्य-वर
जय जीवन-सुख-सिद्धि-विविध-सुविधा-विधान-कर
जय धन-धान्य-समृद्धि-संपदा-संप्रदान-कर
जय प्रसव-ज्ञान-पार्थिव-प्रगट-अज्ञ-प्रजा-मन-मुग्ध-कर

जय जयति प्राथमिक भू-प्रभू, भू-विज्ञान-विदग्ध-वर

श्रीपद्म-कोट,

२७-११-१६१८

१६

जय भुवि मंगल, जय नभ मंगल
जय भुवि नभग, सुभग जग मंगल
जय जल मंगल, जय थल मंगल
जय जल पटल, अटल नग मंगल
जय तृण मंगल, जय तरु मंगल
जय मरु मरुत सरित सर मंगल
जय धन मंगल, जय जन मंगल
उपवन भवन विपिन वर मंगल
जय अणु मंगल, जय कण मंगल
जय अनगणित, कनक मणि मंगल
जय नर मंगल, जय त्रिय मंगल
जय प्रिय प्रणय प्रणत प्राणि मंगल
जय कलि मंगल, जय मल मंगल
कलि-मल जनित प्रकृति-थिति मंगल

जय कृति मंगल, जय धृति मंगल

जय कृति-विकृति-विहित इति मंगल

श्रीपद्म-कोट,

१५-१२-१६१६

२०

जग-मंगल-मग-अनुचिंतनकारी नर जय जय

मग-कंटक-घन-अघ-कृंतनकारी नर जय जय

हरि-सेवन-सत-जीवन-व्रतधारी नर जय जय

जग-श्री-मय जगती-त्रय-मनहारी नर जय जय

जय सुभगति जय सुभग मति सतत सुकृत-सन्मान जय

जय अवितथ अभिरुचि विसद सुखद ज्ञान विज्ञान जय

श्रीप्रयाग,

८-१०-१६

भविष्य मंगल

जयति प्रेम-परिमेय सर्व-सुख-श्रेय-कर्म-रति

जय विवेक-विज्ञेय धीर-धृति-ध्येय धर्म-गति

जय समुचित सम-दृष्टि प्रीति-मय सकल सृष्टि प्रति

जय प्रतिपल परिवर्द्धमान हरि-पद-सेवन-मति

धृतवर्तमान-युत-भूत-भव-वर-विभूति-शत-कोटि-कर

बहु-भव्य-भेष-भूषा-भरित, · जय भविष्य नव-रूप-धर
श्रीपद्म-कोट,
३१-१-१६१६

परिशिष्ट २

बंक मयंक

ए हो सुघर सुधांशु, बंकिमा-संशोभित शशि ;
तू मोइ करत सशंक आजु अति रैनि-अंक बसि ।
होइ न निहचय मोइ नील नभ में को है तू ;
जोह्यौ जो शशि कालिह आजु का नहिं सो है तू ।
व्योम-पंक-प्रस्फुटित सेत सरसिज-दल है तू ;
पारिजात सों पतित मुकुल कोइ कोमल है तू ।
कै कोई आनंद-कंद नंदन-फल है तू ;
शची-कर्न-आभर्न-रत्न कोइ चंचल है तू ।
दिसि-भामिनि-भ्रू-भंग, काल-कामिनि-मिहंग असि ;
कै जामिनि रही अधर बिंब सों मंद हास हँसि ।
सुर-सुंदरि-कल-कंठ-हँसुलि विलुलित थल सों खसि ;
कै अनंग-भस लसत चपल निसि के उछंग बसि ।
कुपित काम-नृप-धनुष, बक्र परजन्य-शस्त्र कोइ ;
किधौं भिन्न हरि-चक्र, स्वर्ग कौ अन्य अस्त्र कोइ ।
मंदाकिनि-तट परयौ तृषित जल-हीन मीन कोइ ;

तइपि रह्यौ तन छीन, व्यौम-चर कै नवीन कोइ ।
वृत्र-बिदारक इंद्र-कुलिस की कुटिल नोंक तू ;
निसि-बिरहिनि-तन लगी मदन की किधौं जोंक तू ।
प्रथम काल कौ बच्चौ प्रकृति कौ बाल-खिलौना ;
नजर बिडारन रच्यौ बजरबट्टू कै टौना ।
दृष्टि-तुला के पला किधौं स्रष्टा बैठारौ ;
सृष्टि-गोद कौ लला मोद-प्रद मात-दुलारौ ।
निशा-योगिनी-भाल-भस्म कौ बाँकौ टीका ;
कै माया-महिषी-किरीट-छाया सुश्रीका ।
कै विरंचि-मस्तक-त्रिपुंड्र-आभास मनोहर ;
कै भारत-तप-तेज-पिंड कौ खंड मंजुतर ।
कै अछूत ब्रह्मांड-छोर कौ छिलुका छूट्यौ ;
किधौं प्रेम-आनंद-अमृत कौ मटुका टूट्यौ ।
किधौं नंदिनी-शृंग व्यौम-पट में प्रतिबिंबित ;
किधौं कु-शंक त्रिशंकु अधर में है अवलंबित ।
सप्त ऋषिन कौ व्यवहृत वक्रीकृत तर्पण-कुश ;
किधौं अभ्र-पथ-पतित शुभ्र मघवा-इभ-अंकुश ।
शिव-गिरि सों सित शिला-खंड मुरि गयौ उछरि कोइ ;
गैल भूलि निज संगिन सों सुर गयो बिछुरि कोइ ।
कै सुमेरु शुचि-वर्न स्वर्न-सागर कौ कौड़ा ;

कै सुर-कानन-कदलि-मूल को कोमल बौंड़ा।
किधौं स्वर्ग-फुलवारी के माली कौ हँसिया ;
कै अम्मृत एकत्र करन की सेत अँकुसिया।
रवि-हय-खुर की छाप किधौं, कै नाल नुकीली ;
काल-चक्र की हाल परी खंडित, कै कीली।
नभ-आसन-आसीन कोई कै तपोलीन ऋषि ;
कै कछु जोति-मलीन कृशित सोइ कला-छीन शशि।

श्रीपद्म-कोट,
१४-११-१८

सांध्य अटन *

१

विजन वन-प्रांत था,
प्रकृति-मुख शांत था,
अटन का समय था,
रजनि का उदय था,
प्रसव के काल की लालिमा में लिहसा, †
बाल शशि व्योम की ओर था आ रहा।

---

* यह और इसके बाद का पद्य मुक्त-वृत्त में है।

† स्थान-संकीर्णता से दोनों पद्यों में प्रत्येक बड़ी पंक्ति दो पंक्तियों में विभक्त करके रखनी पड़ी है।

सद्य-उत्फुल्ल-अरविंद-निभ नील सुवि-
शाल नभ-वक्ष पर जा रहा था चढ़ा ;
दिव्य दिङ्नारि की गोद का लाल-सा।
या प्रखर भूख की यातना से प्रहित
पारणा-रक्त-रस-लिप्सु, अन्वेषणा-
युक्त या क्रीड़नासक्त, मृगराज-शिशु,
या अतिव क्रोध-संतप्त जर्मन्य नृप-
सा; कि या अभ्र-बैलून-उर में छिपा
इंद्र, या इंद्र का छत्र, या ताज, या
स्वर्ग्य गजराज के भाल का साज, या
कर्ण-उत्ताल, या स्वर्ण का थाल-सा।
कभी यह भाव था, कभी वह भाव था ;
देखने का चढ़ा चित्त में चाव था।

२

विजन वन शांत था
चित्त अभ्रांत था
रजनि-आनन अधिक
हो रहा कांत था—
स्थान-उत्थान के साथ ही चंद्र-मुख
भी समुज्ज्वल लगै था अधिकतर भला।

३

उस विमल बिंब से अनति ही दूर, उस
समय एक व्योम में बिंदु सा लख पड़ा,
स्याह था रंग कुछ गोल गति डोलता,
किया अति रंग में भंग उसने खड़ा ;
उतरते-उतरते आ रहा था उधर
जिधर को शून्य सुनसान थल था पड़ा;
आम के पेड़ से थी जहाँ दीखती
प्रेम-आलिंगिता मालती की लता।

४

बस, उसी वृक्ष के सीस की ओर कुछ
खड़खड़ाकार एक शब्द-सा सुन पड़ा ;
साथ ही पंख की फड़फड़ाहट, तथा
शत्रु निःशंक की कड़कड़ाहट, तथा
पक्षियों में पड़ी हड़बड़ाहट, तथा
कंठ औ चोंच की चड़चड़ाहट, तथा
आर्ति-युत कातर-स्वर, तथा शीघ्रता-
युत उड़ाहट-भरा दृश्य इस दिव्य-छवि-
लुब्ध-दृग-युग्म को घृणित अति दिख पड़ा।

चित्त अति चकित, अत्यंत दुःखित हुआ।

श्रीपद्मकोट,

२३-११-१९१८

अटवि-अटन

१

झाड़ बन-खंड था

प्रखर मार्तंड था

विकट मरु वात-उत्पात उद्दंड था।

भूमि के पृष्ठ या व्योम के अंक में

दृष्टि के पंथ-गत दूर पर्यंत पशु,

पक्षि या पुरुष का कहीं दर्शन न था।

पास ही किंतु एक सघन वन्यस्थली

थी कि जिसके समीपस्थ सुविशाल एक

सुघर तालाब, जल-शून्य कर्दम लिये,

अर्ध-सूखा पड़ा था जहाँ हाल ही

का खुदा, बहुत-से बीच में कीर्ण, मौ-

था रहा था जता शूकरों की वहाँ

विपुलता, स्वैरिता तथा आचरण की

चंडता ; तथा पशु-वृंद-निर्द्वंद्वता।

किंतु उस समय वहाँ एक शूकर न था।

२

वायु संक्षुब्ध था,
मन मेरा स्तब्ध अति
प्रकृति के कुपित आक्रोड़ में नद्ध था—
विकट-गति-सनसनाहटित-संगीत-सं-
घटित-संमोह-संपुटित, संरुद्ध था।
किंतु नहिं क्रुद्ध था, किंतु संबुद्ध था।
उसे इस ढंग से प्रकृति के संग मुठ-
भेड़ का कोई मौक़ा न पहले कभी
था पड़ा। अतः कुछ मुग्ध-सा था, तथा
लुब्ध था। प्रकृति के प्रेम के पाश में
बद्ध था। सुज्ञ वह जानता था, सदा
नहीं ऐसा नज़ारा सुगमता सहित,
सब कहीं लभ्य था। अतः सुस्थित रहा।

३

समय अब सांध्य था
पवन में मांद्य था
उस विपिन-पीठिका का वदन सांद्र था।
पक्षि-कुल, कलह में निरत, रव-रहित नभ-

मध्य में विहरने को नि:संकोच बहु
मुदित-से अतिव आने लगे थे विपिन-
ओर से। तथा कइ एक ख़रगोश और
स्यार और हिरन। और लोमड़ी भी बड़ी
एक पड़ी नज़र आकर खड़ी। देखकर
किंतु मुझको विकट-रूप बंदूक-*
धारी, शिकारी-सदृश, वह वहाँ से बड़ी
हड़बड़ी से मुड़ी, उसी वन की तरफ़
थी जहाँ से कढ़ी। मुझे कौतुक बढ़ा,
अतः मैं भी बढ़ा, उसी के पंथ को
पकड़, कार्तूस झट एक हलका चढ़ा।
दौड़ते-दौड़ते, लपकते, झपकते,
हिचकते, झिझकते चला अति दूर तक
घुसा यों ही गया गहन के बीच में
निपट निःक्षोभ, निर्भीक, जी कर कड़ा।

४

किंतु रुकना पड़ा,
वृत्त एक आ पड़ा—
दृष्टि मम धृष्ट आकाश ने ली उड़ा

*पृष्ठ १४६ का फुटनोट देखो।

सबलता सहित एक दृश्य से दी लखा—
बहुत-सी दौड़ और दपट के साथ एक
सुपट-संशोभि, मन-मुग्ध-कारी, नवल
निपट, अति ललित लावण्य-धारी, सुभग,
सुष्ठु, सुललाम, लघु अनति, भारी अनति,
विषद-शृंगार-सौंदर्य-दर्शन-सुखद
व्योम वर-यान, कल किंकिणी की चटुल
मसृण ध्वनि से स्वनित, सपट कर विपल में
पवन-पथ से, तड़ित-चमक-सम, उधर से
जिधर को लोमड़ी थी गई, निकल चट-
पट गया। अधिक भयभीत, आक्रोश-अति-
युक्त, नभ-अटन-रत, पक्षियों का जथा
चट इधर-उधर को फट गया। तब मेरा
विस्मयावेग-पूरित हृदय अधिक-तर
चकित, जागृत तथा कौतुकावृत हुआ।

४

और मैं अब उसी ओर को बढ़ चला,
जिधर नभ-यान-आगमन से गगन-मग
चित्त में स्वचित मेरे हुआ था तदा।
विपिन की निबिड़ द्रुम-वीथियों में पिहित,

पंथ के अंक में निहित, बहु कंटका-
कीर्ण नव-वल्लरी भाणित-रव-झल्लरी-
ध्वनित, गुंजा-लड़ी से अलंकृत तथा
कहीं मृदु मालती-मिलित विटपावली-
वलित गहन-स्थली में अटकता, सुबट
से भटकता, महाकाठिन-श्रम सहित बहु
कष्ट करता, बहुत देर में एक अति
सुष्ठु थल में—जहाँ ताड़ और ताड़िका,
आम्र-तरु-मालिका, बकुल की डालिका,
कदलि-कल-आलिका, माधवी, मल्लिका,
स्वर्ग-शोभा-युता, चारु चंपकलता,
खिलित बेला, चमेली, जुही, मौगरा
की मनोहर महक ने मिलित हो मुझे
पारितोषित किया—प्राप्त, सुथकित, हुआ।

६

वहाँ अति निकट एक विवृत तालाब था,
विहग-कुल कर रहा स्वरित संलाप था।
बकुल-द्रुम-कुंज, त्यों मृदुल मधु-गंध का
लालची मैं सदा से रहा हूँ अतिव,
अतः अति अधिक अन्वेषणा-युक्त हो

फिर चला—मिलें यदि बकुल तो वहाँ पर
सुचित हो कुछक-छन, सुरभि-मद-छकित मन,
श्रम-विगत, श्रन-थकित, मुदित बैठूँ ज़रा।
अहा, झट मिल गया मेल मन का बिना
अधिक आयास ही, क्योंकि अति पास ही
झुंड था नवल एक विमल थल में बड़ा
मुकुल-भारावनत मौलिश्री का खड़ा।

७

अहा ! पर वहाँ पर और एक गुल खिला—
गुल खिला क्या भला, बल्कि वहाँ भूमि पर
कमल-दल-अवलि-मय, कुसुम-आकीर्ण, एक
दृष्टि आस्तीर्ण विस्तीर्ण सुंदर पड़ा।
एक हीरक-जड़ा अंगुलीयक तथा
इत्र की अल्प शीशी-समन्वित, सुघर
बनी जापान की सुबुक संदूकड़ी,
तथा कंघी, तथा रेशमी क़ीमती
नया रूमाल, माला तथा मालती
मौगरे की, बकुल की, विकल रूप से
कोई टूटी, समूची, कोई जर्जरित,
कोई सौरभ-भरित किंतु शोभा-विगत,

बहुत बिखरी पड़ी थीं, तथा और भी
बात एक कथन के योग्य है—सिगरटें
अध-जली, मैच बहु अध-बली, बोतलों
की तथा शीशियों की नली एक दो
निपट टूटी हुई, एक सुराही निकट
डबल रोटी पड़ी थी बड़ी-सी गली।
स्वर्ण का बटन अम्मृतसरी ढंग का,
कमल के बिस्तरे पर पड़ा एक मिला।
उसी के तले एक सुंदरी की ललित
कैबिनट सैज की वक्ष-फोटो * मिली।
पृष्ठ पर शबी के उसी नभ-यान का
चित्र सुस्पष्ट विधि से बना था हुआ,
जिसे लख मार्ग में चित्त मेरा चमत्-
कृत, चकित प्रथम ही हो चुका था बड़ा।

८

विशद वह मुद्रिका, बटन वह स्वर्ण का,
शबी वह छवि-भरी, अभी तक पास है।

श्रीपद्म-कोट,
११-१२-१६१८

---

* अर्थात Bust.

सुसंदेश

अहो छात्र, वर, वृंद, नव्य-भारत-सुत, प्यारे
मातृ-गर्व-सर्वस्व, मोद-प्रद, गोद-दुलारे
अहो भव्य भारत भविष्य निशि के उजियारे
शुभ आशा विश्वास व्योम के रवि, विधु, तारे
गृह-जीवन-नव-ज्योति, प्रेम के प्रकृत स्रोत तुम
विनय-शील-उद्योत, जगत के सुकृत-स्रोत तुम
मातृ-भूमि के प्राण, मातृ-सुख-संप्रदान तुम
मातृ-सत्त्व-संत्राण-कुशल, भुज-बल-निधान तुम
आर्य-बंश-अक्षय-वट के अभिनव प्रबाल तुम
आर्य-संत-जीवन-पट के सुठि तंतु-जाल तुम
आर्य-वर्ण-आश्रम-उपवन के फल रसाल तुम
आर्य-कीर्ति-तंत्री-गुण के स्वर, शब्द, ताल तुम
निज-सुजन्म-संतति-सरोज-वन के मृणाल तुम
मानव-कुल-मानस ह्रद के मंजुल मराल तुम
जग-सुकृत्य-रत भारत के सौभाग्य-भाल तुम
प्रिय स्वदेश अंतर आत्मा के अंतराल तुम
सुरुचि, सुवृत्ति, सुतेज, सुप्रेरित-मति-विशाल तुम
सुघर सुपूत सुमाता के लाड़ले लाल तुम
भारत-लाज-जहाज-सुदृढ़-सुठि-कर्णधार तुम

भारति-कंठ-विहार-विशद-मंदार-हार तुम
निज-अभिरुचि-निज-भाषा-भूषा-भेष-विधाता
निज सत्ता, निज पौरुष, निज स्वत्वों के त्राता
निज-परता-भ्रम-रहित करौ निज-हित-विचार तुम
हित-परता-क्रम-सहित करौ पर-हित-प्रचार तुम
सत-सेवा-व्रत धार जगत के हरौ क्लेश तुम
देश देश में करौ प्रेम का अभिनिवेश तुम
इस विधि से निस्संग करौ सेवा-प्रसंग तुम
फिर फिर पर-हित-हेतु भरौ उर में उमंग तुम
सब विधि यों युव-वृंद, बनौ नर-प्रवर, वंद्य, तुम
त्यों हरि-पद-अरविंद-भ्रमर, भुवि-समभिनंद्य तुम

श्रीपद्म-कोट,

१४-११-१६१६

आर्य-महिला

अहो पूज्य भारत-महिला-गण, अहो आर्य-कुल-प्यारी
अहो आर्य-गृह-लक्ष्मि-सरस्वति, आर्य-लोक-उजियारी
अहो आर्य-मर्याद-स्रोतिनी, आर्य हृदय की स्वामिनि
आर्य-ज्योति, आर्यत्व-द्योतिनी, आर्य-वीर्य-घन-दामिनि
आर्य-धर्म-जीवन-महिमा-मयि, आर्य-जन्म-संजीवनि

आर्य-शील-सुषमा-मयि, सुंदरि, अयि मा, आर्य-सती-मणि
अयि त्रिभुवनअभिवंद्य-यशस्विनि, अयि त्रि-शक्ति-संशोभिनि
त्रिगुण-जयिनि, मृग-नयनि, मनस्विनि, मधुमयि, त्रिजग-प्रलोभिनि
तुम हो शक्ति अजेय विश्व की, अयि अमेय-बल-धारिणि
अयि स्वदेश-सुख-दुःख-संगिनी, अखिल-श्रेय-संचारिणि,
आर्य-जगत में जननि पुनः निज जीवन ज्योति जगाओ,
आर्य-हृदय में पुनः आर्यता का शुचि स्रोत बहाओ,
अक्षय-सुकृत-मयी, स्व-कुक्षि से कृती आर्य सुत ज्याओ
त्रितय-शक्ति-पूरित स्व-वक्ष से पुनः पुंस्त्व-पय प्याओ,
करो सार्थ कमनीय नाम निज अहो आर्य-कुल-कामिनि
आर्य-प्रेम की पुण्य-पताका, आर्य-गेह की स्वामिनि।

— श्रीपद्म-कोट,
१६-१२-१६१६

नट नागर हैं न कहीं अटके
नट नागर हैं न कहीं अटके।
अधिवासी बने सबके घट के
रहैं तो भी सदा सबसे हटके
बहैं प्रेम-प्रवाह में बे-खटके
नट नागर हैं न कहीं अटके।

२

जहाँ सत्य पै सीस गिरे कटके
जहाँ कृत्य पै खड्ग खरे खटके
वहाँ भृत्य बने अपने भट के
नट नागर हैं न कहीं अटके।

३

अहि-मुंड पै जो चढ़के मटके
गज-सुंड पै जाके अड़े डटके
अरि हैं अब भी हरि संकट के
नट नागर हैं न कहीं अटके।

४

धर पाए कभी जो कहीं टटके
भरे प्रेम के माखन के मटके
अटके जो कहीं, तो वहीं अटके
नट नागर हैं न कहीं अटके।

श्रीपद्म-कोट,
१६१८

उराहिने कौ उत्तर

तुम कों हारि गए हम हेरत।

हारि गए थाकी त्यों बानी
फिरि फिरि टेरत टेरत

२

दैदै द्वैद्वै हाथ, पायँ, दृग,
तुम कौं हम पछिताने ;
नातौ हाय जोरि कें पीछें
धोखौ खाय खिस्याने
तुम कों हारि गए हम हेरत।

३

बौहौत दिनन तें सुनत तुम्हारौ,
झूँठौ निपट उरहानौ ;
खीजतु हियौ हमारौ छिन-छिन
छीजतु प्रेम पुरानौ
तुम कों हारि गए हम हेरत।

४

तुमसों हमने कहा दुरायौ,
औरन कौं कहा दीनौ ;
और सबन के संग बावरे,
तुम कों कहा न कीनौ
तुम कों हारि गए हम हेरत।

५

तुमने आपु आपु करि अपनौ,
आपौ अपु बिसरायौ
हमें लगावत दोष नेंक हू,
मन संकोचु न आयौ
तुम कों हारि गए हम हेरत।

६

जैसे हैं प्रिय और हमारे,
तैसे तुम हूँ प्यारे ;
संग संग हम फिरैं तुम्हारे
तौ हू हाय बिसारे ।
तुम कों हारि गए हम हेरत ।

७

समझ-बूझ की तुम्हें न सूझति,
हमें सुनाओ औंधी;
आँख-मिचौनी हम खेलैं, कै
तुम कों भई रतौंधी
तुम कों हारि गए हम हेरत ।

८

"भुवन-विदित सत भाव" हमारौ,

तुम कों विदित न सोई ;
अविदित कों जौ करौ विदित तुम,
तौ फिरि कहा न होई
तुम कों हारि गए हम हेरत ।

६

करौ विदित को हौ तुम, को हम,
कहा हमारौ नातौ ;
जाँचौ सँभरि प्रेम कौ बीजकु,
खोलि पुरानौ खातौ
तुम कों हारि गए हम हेरत ।

श्रीपद्म-कोट,
५-१२-१९१७

कृतज्ञता ब्रिटेन की भारत के प्रति

(कम पढ़े लोगों के लिये)

प्रिय भारत मेरा मित्र आज मेरे मन को अति भाया है ।

१

जिस दिन जर्मन ने लिया मुझसे मुखड़ा मोड़,
दिया पुरानी प्रीति का एकदम नाता तोड़ ;
एकदम नाता तोड़ जंग का जबरन जोड़ जमाया है

बरसों से दिल में लगी डाह की ज्वाला को धधकाया है
मेरा और मेरों के विनाश का पूरा साज सजाया है
लख घोर पाप की लीलाओं को अजाजील शर्माया है
दे मुझे प्रेम का हाथ उसी दिन से तू हुआ सहाया है
प्रिय भारत मेरा मित्र आज मेरे मन को अति भाया है

२

तेरे लाखों पुत्र प्रिय पहुँचे धड़ से धाय,
पहली ही मुठभेड़ में दुश्मन दिया दबाय ;
दुश्मन दिया दबाय नगर पैरिस का जाय बचाया है
फिर और और भी जगह प्रेम का परचा मैंने पाया है
तेरे पुत्रों ने मेरे लिये सब कुछ करके दिखलाया है
दे डाला है अपना सब कुछ, कुछ मुझसे नहीं छिपाया है
इससे मैं हूँ तेरा कृतज्ञ मन में अति प्रेम समाया है
प्रिय भारत मेरा मित्र आज मेरे मन को अति भाया है

३

हिंदू, मुसलिम, पारसी, तेरे सुत-समुदाय,
मेरी आपद में सभी मेरे हुए सहाय;
मेरे हुए सहाय सभी मजहब का भेद भुला करके
एकदम घर का तज मोह जुटे मैदान जंग में जा करके
नहिं डरे मौत से, लड़े क़हर दुश्मन के बीच मचा करके

मर मिटे मारकर लाखों को दुश्मन का जोम घटा करके
तन से, मन से, धन से तूने यों मुझसे प्रेम बढ़ाया है
प्रिय भारत मेरा मित्र आज मेरे मन को अति भाया है

४

नाता दोनों का दृढ़ा अटल प्रेम का आज,
जग में जिएँ जुगानजुग महारानी महाराज ;
महारानी महाराज जिएँ जग शोभा-साज सजा करके
निज-धर्म-कर्म में रहैं लगे शुभ-जीवन-जोति जगा करके
हरषावैं जग को प्रेम-विजय-दुंदुभि का नाद सुना करके
होवै सारा सम्राज मुदित, आनंद-बधाई गा करके
प्रेमी ने अवसर पाय प्रेम का गौरव गाय सुनाया है
प्रिय भारत मेरा मित्र आज मेरे मन को अति भाया है

श्रीपद्म-कोट, प्रयाग,
२१-११-१९१८

मजदूरनियों के लिये—

बलि-बलि जाऊँ (१)

भारत पै सैयाँ मैं बलि-बलि जाऊँ
बलि बलि जाऊँ हियरा लगाऊँ
हरवा बनाऊँ घरवा सजाऊँ

मेरे जियरवा का, तन का, जिगरवा का
मन का, मँदिरवा का प्यारा बसैया
मैं बलि-बलि जाऊँ
भारत पै सैयाँ मैं बलि-बलि जाऊँ

२

भोली-भोली बतियाँ, साँवली सुरतिया
काली-काली ज़ुल्फ़ोंवाली मोहनी मुरतिया
मेरे नगरवा का, मेरे डगरवा का
मेरे अँगनवा का, कारा कन्हैया
मैं बलि-बलि जाऊँ
भारत पै सैयाँ मैं बलि-बलि जाऊँ

श्रीपद्म-कोट,
१५-१२-१६१७

बलि-बलि जाऊँ (२)

भारत पियरवा पै बलि-बलि जाऊँ

बलि-बलि जाऊँ गरवा लगाऊँ
फुलवा मँगाऊँ गजरा गुथाऊँ
नीकी नजरिया पै, जी पै, जिगरवा पै,
सिजिया बिछाऊँ सजाऊँ सिंगरवा

मैं बलि-बलि जाऊँ
प्यारे लँगरवा पै बलि-बलि जाऊँ
भारत पियरवा पै बलि-बलि जाऊँ

२

साँवली सुरतिया, मोहनी मुरतिया
लागी पिरितिया, दिन और रतिया
बाँका रँगीला-सा, छैला छबीला-सा
फिरे अलबेला-सा दिल के दगरवा
मैं बलि-बलि जाऊँ
प्यारे लँगरवा पै बलि-बलि जाऊँ
भारत पियरवा पै बलि-बलि जाऊँ

श्रीपद्म-कोट,
१७-१२-१६१७

बलि-बलि जाऊँ (३)

मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ
गुइयाँ मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ
भारत है मेरा, प्रानों का प्यारा
दिल का दुलारा, जीवन-अधारा
उसपै तन मन को वारूँ उसपै त्रिभुवन को हारूँ

उसको पलकों पै धारूँ ,उसको दिल पै बैठारूँ
मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ
गुइयाँ मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ

२

भारत है मेरा कुँवर कन्हैया
बन-बन में मेरी चराता है गैया
उसको बन से बुलाऊँ उसको माखन खिलाऊँ
उससे बंसी बजवाऊँ अपने अँगना नचाऊँ
मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ
गुइयाँ मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ

३

भारत है मेरा प्यारा ललनवा
करता कलोलें(मेरे)दिल के पलनवा
उसको गोदिया उठाऊँ उसके कजरा लगाऊँ
उसको मल-मल न्हिलाऊँ उसको अँचरा पिलाऊँ
मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ
गुइयाँ मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ

४

भारत है मेरा दुनिया से न्यारा,
मेरी बलंदी, मेरा सितारा,

उसपै दिठिया लगाऊँ, उससे रोशन हो जाऊँ,
मैं तो उसमें समाऊँ, अपना आपा भुलाऊँ,
मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ
गुइयाँ मैं तो भारत पै बलि-बलि जाऊँ
श्रीपद्म-कोट,
१६-१२-१६१७